कुरुक्षेत्र

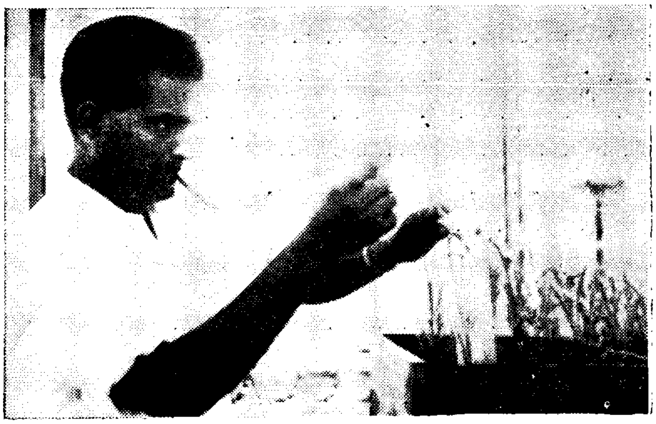

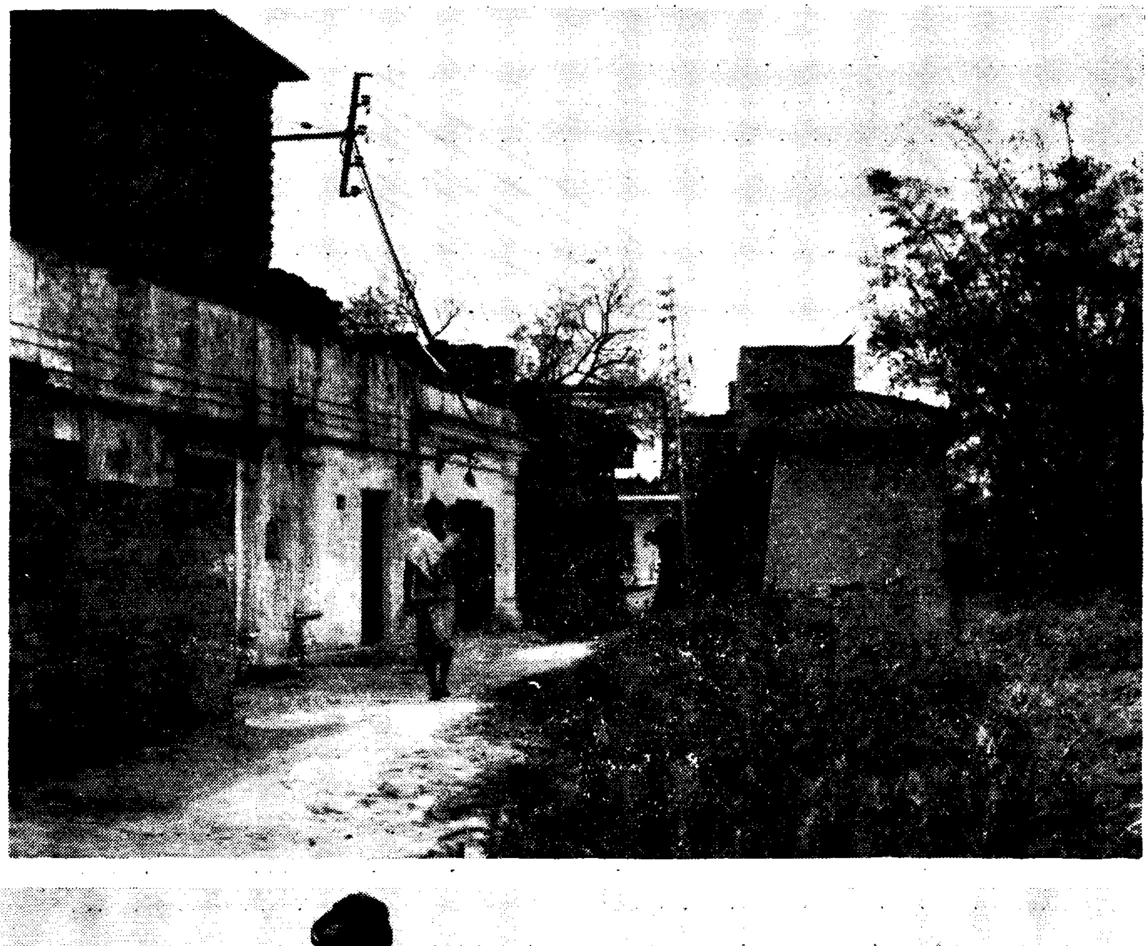

संपादकीय

किसानों पर प्रकृति का बज्र प्रहार

हरियाणा, पंजाब, उत्तर प्रदेश, राजस्थान और हिमाचल प्रदेश में किसानों पर प्रकृति के बज्र प्रहार के जो समाचार मिले हैं उनसे पता चलता है कि इस वर्ष गेहूं के उत्पादन में वृद्धि की जितनी आशा की जा रही थी उतनी अब दिखाई नहीं देती। बेमौसमी वर्षा, आंधी, तूफान और ओलों की मार से किसान तिलमिला उठा है। आकाश से बूंदें गिरने के साथ-साथ उसकी आंखों से भी बूंदें टपकती रहीं। जहां एक ओर खेत-खलिहानों में गेहूं की फसल के पड़े अम्बार भीग कर सड़ते रहे वहां दूसरी ओर भयंकर तूफानों से बागों में आम की फसल बिल्कुल तबाह हो गई। बड़े-बड़े वृक्ष उखड़ कर जमीन पर जा गिरे हैं। कहीं-कहीं इनसे जन-धन की अपार क्षति हुई है।

उत्तर प्रदेश में गत फरवरी-मार्च में ओला वृष्टि और तूफान से लगभग दस अरब रुपये के जन-धन की हानि हुई। इससे राज्य के 43 जिलों के 24,852 गांव और 19,21,197 हेक्टेयर कृषि क्षेत्र प्रभावित हुए। इनमें 26,024 मकान क्षतिग्रस्त हुए तथा 34 व्यक्तियों और 2505 पशुओं की जानें गईं। इसी तरह अन्य बेमौसमी वर्षाग्रस्त राज्यों में भी जन-धन की भारी क्षति हुई है।

पंजाब, हरियाणा, दिल्ली, राजस्थान और उत्तर प्रदेश आदि राज्यों के सम्मिलित भाग को गेहूं का भण्डार कहा जाता है। केन्द्रीय अन्न भंडार के लिए अधिकांश गेहूं देश के इसी भाग से वसूल होता है। परन्तु प्रकृति के इस प्रकोप के कारण बाजार में अब तक गत वर्ष की अपेक्षा आधा ही गेहूं आ पाया है। गत वर्ष इस अवधि तक जहां 24 लाख टन गेहूं बाजार में आ गया था और इसमें से सरकारी एजेंसियों ने 22 लाख टन खरीद लिया था, वहां अब तक इस वर्ष केवल 12 लाख टन गेहूं बाजार में आ पाया है और इसकी सरकारी खरीद अब तक केवल 11 लाख टन ही रही है।

इस वर्ष सरकार ने वसूली मूल्य भी 130 रुपये क्विंटल से बढ़ाकर 142 रुपये क्विंटल कर दिया था जिससे किसानों को काफी लाभ होने की उम्मीद थी। परन्तु किसानों की गेहूं की फसल चौपट हो जाने से अब उनकी आशाओं पर तुषार-पात हो गया है। इससे लाभप्रद मूल्य तो क्या लागत मूल्य तक मिलना कठिन हो रहा है। हमारी कृषि पर हुए इस आघात का दुष्प्रभाव न सिर्फ हमारी समूची अर्थ-व्यवस्था पर ही पड़ेगा, बल्कि ऋतु विपर्यय से कीट-पतंग, मच्छर आदि विषैले जीव-जन्तु भी पनपते हैं और बीमारियां फैलती हैं।

किसानों पर पड़े प्रकृति के इस बज्र प्रहार से हमारी प्रधानमंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी बड़ी चिंतित हैं और उन्होंने कृषि मंत्री तथा अन्य संबंधित अधिकारियों को आदेश दे दिए हैं कि किसानों को इस संकट की घड़ी में उनको यथा-शक्ति राहत पहुंचाई जाए।

उत्तर प्रदेश सरकार ने समस्त जिला अधिकारियों को निर्देश दे दिये हैं कि वर्षा तथा ओलावृष्टि से प्रभावित क्षेत्रों में राष्ट्रीय ग्रामीण योजना के अन्तर्गत विकास कार्यक्रमों को तेज किया जाए जिससे प्रभावित व्यक्तियों को रोजगार के अधिक अवसर प्राप्त हो सकें। इसी तरह हरियाणा, पंजाब आदि के प्रभावित क्षेत्रों में भी इस प्रकृति प्रकोप से प्रभावित व्यक्तियों को राहत पहुंचाने के लिए कदम उठाए जा रहे हैं। परन्तु थोड़े राहत कार्यों और कुछ ऋण उपलब्ध करा देने से किसान का कितना भला हो सकता है। जरूरत इस बात की है कि उसकी प्रकृति-जन्य समस्या का कोई स्थायी हल निकाला जाए। हम वर्षों से देश में किसानों के लिए किसान बीमा लागू करने की बात सुनते आ रहे हैं परन्तु इस दिशा में क्या कोई कारगर कदम उठाया गया है। उत्तर नकारात्मक ही हो सकता है। किसानों की यह समस्या तभी हल हो सकती है जब किसान बीमा लागू करने के लिए कारगर कदम उठाए जाएं और इसे इस तरीके से लागू किया जाए जिससे किसानों का हितसाधन हो। □

मज़दूर मंज़िल

'कुरुक्षेत्र' के लिए मौलिक लेख, कहानी, एकांकी, कविता, संस्मरण, हास्य-व्यंग्य चित्र आदि भेजिए।

●

अस्वीकृत रचनाओं की वापसी के लिए टिकट लगा व पता लिखा लिफाफा साथ आना आवश्यक है।

●

'कुरुक्षेत्र' की एजेन्सी लेने, ग्राहक बनने, पता बदलने या अंक न मिलने की शिकायत व्यापार व्यवस्थापक प्रकाशन विभाग, पटियाला हाउस, नई दिल्ली-110001 से कीजिए।

सम्पादकीय पत्र-व्यवहार : सम्पादक कुरुक्षेत्र (हिन्दी), ग्रामीण विकास मन्त्रालय 467, कृषि भवन, नई दिल्ली के पते पर करें।

एक प्रति 1 रु० वार्षिक चन्दा 10 रु०

व्यापार व्यवस्थापक: एस० एल० जायसवाल

सहायक व्यापार व्यवस्थापक :
एल० आर० बत्रा

सहायक निदेशक (उत्पादन) :
के० आर० कृष्णन

दूरभाष : 382406

सम्पादक : महेन्द्र पाल सिंह

उपसम्पादक : राधे लाल

आवरण पृष्ठ : कुमारी अलका

कुरुक्षेत्र

ग्रामीण विकास का प्रमुख मासिक

वर्ष 27 | आषाढ़-श्रावण 1984 | अंक 9

PUBLICATIONS DIVISION
LIBRARY
MINISTRY OF I. & B.

इस अंक में — **पृष्ठ संख्या**

समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम के बढ़ते कदम — 2

समन्वित ग्रामीण विकास और राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार — 4
डा० भंवर सिंह पोर्ते

ग्रामीण महिलाओं के लिए धुआं रहित चूल्हे व अन्य सुविधाएं — 5
जी० सी० माथुर

गांवों में महिलाओं के लिए लाभदायक रोजगार — 8
कुमारी एम० गोविलकर

कृषि प्रसार की नवीन प्रणाली, प्रशिक्षण एवं भ्रमण — 11
गंगा शरण सैनी

बिहार में सहकारिता द्वारा आदिवासी उत्थान — 14
जे० सी० लोहनी

माजरा गांव की काया ही बदल गई — 16
बलराम दत्त शर्मा

भारतीय बैंकिंग का ग्रामोन्मुखी विकास — 18
अमिताभ तिवारी

गांव के लिए शिक्षा कैसी होनी चाहिए ? — 21
केवल कृष्ण चोपड़ा

प्रचुर दूध योजना से गरीब दुग्ध उत्पादकों की आय में वृद्धि — 23

श्रमिक कुण्ठा उत्पादकता वृद्धि में बाधक — 26
राकेश कुमार अग्रवाल

कृषि इंजीनियरी विशेषांक का विमोचन — 29

केन्द्र के समाचार — 31

खुशहाली की राह पर — आवरण पृष्ठ 3

छोटे किसानों के लिए मुर्गी पालन की सुविधाएं — आवरण पृष्ठ 4

समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम के बढ़ते कदम

समन्वित ग्रामीण विकास के लाभभोगियों के लिए सामूहिक आधार पर सहायता सुलभ करने हेतु एक प्रस्ताव पर विचार-विमर्श करने हेतु अतिरिक्त सचिव की अध्यक्षता में 12 अप्रैल, 1982 को एक बैठक हुई थी। इस बैठक में उत्तर प्रदेश, हरियाणा तथा राजस्थान राज्यों के समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम के प्रभारी सचिवों ने भाग लिया था। खाद्य तथा कृषि संगठन के एक विशेषज्ञ और विभिन्न राष्ट्रीयकृत बैंकों के प्रतिनिधियों ने भी बैठक में भाग लिया था।

समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम तथा ट्राइसेम योजना के प्रभारी सचिवों का एक दो-दिवसीय सम्मेलन 22 व 23 अप्रैल 1982 को नई दिल्ली में हुआ था। राज्य सचिवों के अतिरिक्त, सम्मेलन में वित्त मंत्रालय तथा गृह मंत्रालय, योजना आयोग, भारतीय रिजर्व बैंक, राष्ट्रीयकृत बैंकों के प्रतिनिधियों और मंत्रालय के वरिष्ठ अधिकारियों ने भाग लिया था। विचार-विमर्श में लगभग 100 भागीदारों ने भाग लिया था। समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम तथा ट्राइसेम की प्रगति की पुनरीक्षा की गई थी और इनके प्रभावी कार्यान्वयन के लिए उठाए जाने वाले कदमों के बारे में विचार-विमर्श किया गया था। 1982-83 में समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम के कार्यान्वयन में विभिन्न प्रयासों को पूरा करने के लिए एक अंतरिम समय सूची तैयार की गई थी। पारिवारिक सर्वेक्षणों पर आधारित वार्षिक कार्यवाही योजनाएं तैयार करना, ऋण शिविरों तथा मेलों का आयोजन, राज्य स्तरीय समिति द्वारा खण्ड योजनाओं की संस्वीकृति आदि को भी इस कार्यवाही सूची में विशेष रूप से शामिल किया गया था। सभी प्रकार की अपेक्षित सहायता सुलभ करके तथा सम्पर्क स्थापित करके गरीब ग्रामीणों के लाभ के विभिन्न विकास कार्यक्रमों को समन्वित करने की वांछनीयता पर भी बल दिया गया था। बैंक समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम के अन्तर्गत ऋण की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए अपने संगठनों को सुदृढ़ करने हेतु सहमत हो गए थे। 1981-82 के लिए राज्य सचिवों से प्राप्त रिपोर्टों से मालूम हुआ है कि 217 करोड़ रुपये की धनराशि खर्च हुई थी। 280 करोड़ रुपये का ऋण जुटाया गया था। कार्यक्रम के अन्तर्गत लगभग 18 लाख परिवारों को लाभ पहुंचा था। तथापि, ये आंकड़े अन्तिम नहीं हैं।

परियोजना अधिकारियों तथा सहायक परियोजना अधिकारियों और जिला ग्रामीण विकास एजेंसियों के लिए पुणे में 19 से 30 अप्रैल, 1982 तक कृषि बैंकिंग कालेज द्वारा ऋण प्रबन्ध संबंधी एक पाठ्यक्रम का आयोजन किया गया था। अतिरिक्त सचिव (ग्रा०वि०) तथा संयुक्त सचिव (आई० आर० डी०) ने क्रमशः 20 व 29 अप्रैल, 1982 को भाग लेने वाले व्यक्तियों को सम्बोधित किया था।

परियोजना अधिकारियों, उपायुक्तों, साहूकारों तथा राज्य में अन्य संबंधितों के लिए पंजाब कृषि विश्वविद्यालय, लुधियाना में समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम के बारे में एक कार्यशाला का आयोजन किया गया था। इसमें मंत्रालय के वरिष्ठ अधिकारियों तथा पंजाब सरकार के मुख्य सचिव और अन्य संबंधित अधिकारियों ने भाग लिया था।

राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम

अतिरिक्त सचिव (ग्रा० वि०) की अध्यक्षता में 14 अप्रैल, 1982 को राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम के बारे में केन्द्रीय समिति की एक बैठक हुई थी। समिति में लिए गए मुख्य निर्णय निम्नलिखित हैं :—

(क) वर्ष 1982-83 के लिए योजना के अन्तर्गत सुलभ किए गए 190 करोड़ रुपये में से राज्यों/केन्द्रशासित क्षेत्रों को केन्द्रीय अंश के रूप में 180 करोड़ रुपये आवंटित किए जाते हैं और शेष 10 करोड़ रुपये सिक्किम तथा अन्य पात्र राज्यों सहित उत्तर पूर्वी क्षेत्र के राज्यों की अतिरिक्त आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए आरक्षित रखे जाते हैं।

(ख) फिलहाल केवल दो प्रथम तिमाहियों के लिए आवंटन किए जाते हैं।

(ग) सामाजिक वानिकी तथा पौधरोपण के लिए 10 प्रतिशत निधियों और विशेष रूप से अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित जनजातियों को लाभ पहुंचाने वाले निर्माण कार्यों के लिए अन्य 10 प्रतिशत निधियों के आबंटनों को अलग से दर्शाया जाना है और उन्हें किसी अन्य कार्य के लिए प्रयोग में लाने की अनुमति नहीं होगी।

(घ) मई 1982 के अंत तक सभी राज्यों/केन्द्रशासित क्षेत्रों में राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम तथा खाद्य के प्रभारी सचिवों का एक सम्मेलन बुलाया जाए जिसमें राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम के कार्यान्वयन तथा राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम

के अन्तर्गत निर्माण कार्यों के लिए खाद्यान्नों के आबंटन उनके परिवहन तथा वितरण को कारगर बनाने के संबंध में विचार-विमर्श किया जाए।

सूखाग्रस्त क्षेत्र कार्यक्रम

कार्यक्रम के मुख्य उद्देश्यों में से एक उद्देश्य शुष्क भूमि खेती का उत्पादकता में सुधार करना है जो नए 20-सूत्री कार्यक्रम में एक महत्वपूर्ण मद भी है। यद्यपि सिंचाई का विस्तार करने हेतु हर प्रयास किया जाना है फिर भी यह स्पष्ट है कि अधिकांश फसली क्षेत्र वर्षा पर निर्भर रहेगा और इसके अभाव में इन क्षेत्रों में फसलोत्पादन में महत्वपूर्ण वृद्धि, वहां की अधिकांश जनता की आय तथा उनके रहन-सहन का स्तर नीचा और असंतोषजनक रहेगा। अनुभवों से यह साबित हो गया है कि वर्षा पर आश्रित क्षेत्रों में वर्तमान फसलोत्पादन स्तरों में पर्याप्त रूप से वृद्धि की जा सकती है। किसानों की सामूहिक प्रयास करके प्रौद्योगिकी अपनाने में सहायता की जानी है और इस कार्यक्रम को 1982 के खरीफ के मौसम से शुरु किए जाने की परिकल्पना की गई है। राज्य सरकारों से आवश्यक कदम उठाने के लिए कहा गया है। उन्हें इन कार्यों को करने के लिए कहा गया है :—

(1) आंकड़े एकत्र करना (2) गहन प्रदर्शन क्षेत्रों का चुनाव तथा किसानों का चयन (3) बहु-शस्योत्पादन अथवा दोनों के माध्यम से एक-फसली पद्धति को हटाना (4) अन्य किसानों द्वारा प्रदर्शन क्षेत्रों के दौरे करने की व्यवस्था करना (5) आयोजित किए गए प्रदर्शनों के परिणामों की पुनरीक्षा तथा मूल्यांकन करना (6) भूमि सरंक्षण जैसे सहायक उपाय शुरु करना तथा सुधरे कृषि औजारों के प्रयोग को प्रोत्साहन देना और अंत में कार्यक्रम को प्रभावी रूप से कार्यान्वित करने के लिए संगठनात्मक प्रबन्धों की योजना बनाना तथा उन्हें समन्वित करना।

ग्रामीण प्रबन्ध के लिए राष्ट्रीय केन्द्र

ग्रामीण विकास कार्यक्रमों के शीघ्र कार्यान्वयन में आने वाली एक अड़चन ग्रामीण क्षेत्रों में प्रशिक्षण जनशक्ति का अभाव है। इसलिए इस मंत्रालय ने सरकारी कर्मचारियों, सहकारी तथा सामूहिक संस्थानों के कार्यकर्ताओं, पंचायती राज निकायों, कृषक संगठनों तथा स्वैच्छिक एजेंसियों और ग्रामीण उद्यमियों, जिन्हें प्रबन्ध व्यवस्था में प्रशिक्षित किए जाने की आवश्यकता है, को प्रशिक्षण देने के लिए दिल्ली में एक राष्ट्रीय ग्रामीण प्रबन्ध केन्द्र स्थापित करने का प्रस्ताव किया है। इस आशय का एक प्रस्ताव योजना आयोग को अनुमोदनार्थ भेजा गया है।

स्वरोजगार हेतु प्रशिक्षण केन्द्र की योजना

इस मंत्रालय ने स्कूल जाने वाले बच्चों के लिए ग्रामीण युवाओं को स्वरोजगार हेतु प्रशिक्षण देने की एक उप-योजना (ट्राइसेम) तैयार की है। इस प्रयोजन के लिए उन विद्यार्थियों, जो किसी विशेष कुशलता में रुचि रखते हों, को विभिन्न हुनरों में प्रशिक्षण देने के लिए प्रत्येक खंड में एक स्कूल का चयन किया जाएगा। इस योजना को अनुमोदन हेतु योजना आयोग को भेजा जा रहा है।

जिला आपूर्ति तथा विपणन सोसायटी

समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम के अन्तर्गत इस मंत्रालय के पास द्वितीय तथा तृतीय क्षेत्रों का एक महत्वपूर्ण घटक है। उद्योग, सेवा तथा व्यापार घटक के अन्तर्गत देश में 5011 खण्डों में से प्रत्येक खण्ड में द्वितीय तथा तृतीय क्षेत्र की गतिविधियों में 200 परिवारों को व्यवस्थित किया जाना है। कच्चे माल की सप्लाई तथा तैयार उत्पादों के विपणन के लिए एक प्रभावी संगठन के बिना कुटीर तथा ग्रामोद्योगों के क्षेत्र में बल देने से परिणाम प्राप्त नहीं हो सकते हैं। इस संदर्भ में इस मंत्रालय ने स्थानीय जिला आपूर्ति तथा विपणन सोसायटियों के बारे में एक योजना तैयार की है। इसे अनुमोदन के लिए योजना आयोग को भेजा गया है।

प्रशिक्षण केन्द्रों की योजना

एक युक्तिमूलक प्रशिक्षण आधारभूत ढांचा सृजित करने के लिए एक दीर्घावधि नीति के रूप में ग्रामीण युवाओं को स्वरोजगार हेतु प्रशिक्षण देने की योजना (ट्राइसेम) से संबंधित मार्गदर्शक सिद्धांतों में कम से कम एक संयुक्त कृषि प्रशिक्षण केन्द्र (कृषि विपणन केन्द्र के प्रतिमान पर) तथा जिला स्तर पर एक ग्रामीण औद्योगिक प्रशिक्षण संस्थान केन्द्र स्थापित करने का प्रावधान है।

तदनुसार, संयुक्त ग्रामीण प्रशिक्षण केन्द्र की स्थापना के लिए एक योजना तैयार की गई है जिसे अनुमोदन के लिए योजना आयोग को भेज दिया गया है।

समीक्षाधीन अवधि के दौरान गोष्ठियों, पाठ्यक्रमों तथा कार्यशालाओं का आयोजन करने के लिए विभिन्न संगठनों को 39,561 रुपये की धनराशि आबंटित की गई है।

राष्ट्रीय ग्रामीण विकास संस्थान, हैदराबाद

संस्थान की वित्त संबंधी स्थायी समिति की बैठक 19 अप्रैल 1982 को संस्थान में आयोजित की गई थी। कार्यकारी परिषद् की आगामी बैठक के समक्ष प्रस्तुत करने हेतु उत्तर-पूर्व में राष्ट्रीय ग्रामीण विकास संस्थान के लिए क्षेत्रीय केन्द्र की स्थापना, क्रय प्रणाली तथा अन्य मदों जैसे महत्वपूर्ण मुद्दों पर विचार किया गया था।

भूमि सुधार

भूमि अधिग्रहण अधिनियम, 1894 (1982 का विधेयक संख्या 67) में संशोधन करने हेतु एक विधेयक लोकसभा में 30-4-1982 को पेश किया गया था।

श्री आर० के० रथ, संयुक्त सचिव (भूमि सुधार) को 19 अप्रैल से 24 अप्रैल, 1982 तक बैंकाक (थाइलैंड) में एशिया तथा प्रशांतीय क्षेत्र में कृषि सुधार तथा ग्रामीण विकास के प्रबोधन तथा मूल्यांकन के लिए समाजार्थिक सूचकों के बारे में खाद्य तथा कृषि संगठन के विशेषज्ञ परामर्श में भाग लेने हेतु भेजा गया था। श्री रथ को इस परामर्श में अध्यक्ष चुना गया था। □

समन्वित ग्रामीण विकास और राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार

डा० भंवर सिंह पोर्ते

मध्यप्रदेश की आबादी का एक तिहाई भाग अनुसूचित जाति और आदिवासी भाईयों का है जो सामाजिक और आर्थिक दृष्टि से अभी भी बहुत पिछड़े हुए हैं। जब तक राष्ट्रीय जीवन की मूलधारा से समरस होकर वे आगे आने के लिए उत्सुक न हों तब तक हमारे विकास कार्यक्रमों की सफलता संदिग्ध रहेगी। इस दृष्टि से प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी ने जिस नये 20-सूत्री कार्यक्रम की घोषणा की है उसमें एकीकृत ग्रामीण विकास और राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम को सूत्र क्रमांक 3 के रूप में यथोचित महत्त्व दिया गया है। जैसा कि इनमें नामों से ही प्रकट है कि ग्रामीण विकास एक बहुक्षेत्रीय गतिविधि है जिसमें न केवल कृषि विकास परन्तु ग्रामोद्योगों तथा सामाजिक आर्थिक आधारित संरचना सुविधाओं को भी शामिल किया गया है। ग्रामीण क्षेत्रों के गरीब व्यक्तियों को विशेष रूप से गरीबी की रेखा के नीचे रहने वाले व्यक्तियों को उससे ऊपर उठाना और उन्हें जीवन-यापन के लिए रोजगार के प्रचुर साधन जुटाना इस कार्यक्रम के मूल प्रयोजन है।

एकीकृत ग्रामीण विकास कार्यक्रम एक हितग्राही मूलक कार्यक्रम है। इस कार्यक्रम के अन्तर्गत प्रतिवर्ष प्रति विकास खण्ड 600 हितग्राहियों को लाभान्वित करने का लक्ष्य है। इस प्रकार प्रदेश में वर्ष में 2,75,400 हितग्राहियों को लाभान्वित किया जाना है। योजनान्तर्गत हितग्राहियों को अभिज्ञापन कर उनके ऋण प्रकरण तैयार कर वित्तदायी बैंकों से ऋण स्वीकृत कराकर कार्यक्रम के अन्तर्गत अनुदान उपलब्ध किया जाता है। स्वरोजगार योजना भी एकीकृत विकास कार्यक्रम का ही अंग है। इसके अन्तर्गत प्रत्येक विकास खंड में 40 व्यक्तियों को प्रतिवर्ष प्रशिक्षित करने का लक्ष्य है। प्रशिक्षण के बाद इन्हें स्वरोजगार में स्थापित किया जाता है। इस योजना के अन्तर्गत प्रत्येक वर्ष 18,360 हितग्राहियों को लाभ पहुंचाना है।

यह उल्लेखनीय है कि इस योजना के अन्तर्गत 21 करोड़ 82 लाख रु० की राशि 81-82 में विकास खंडों को दी जानी थी जिसमें से दिसम्बर 81 के अन्त तक 11 करोड़ 60 लाख रु० की राशि दी जा चुकी है। वर्ष 1982-83 में एकीकृत ग्रामीण विकास के लिए वर्ष भर में विभाजित कार्य-सूची प्रस्तावित की गई है जिससे सामान्य औपचारिकताएं पूरी होने पर अंतिम स्वरूप दिया जाएगा। इसमें संपूर्ण राज्य के लिए 1 वर्ष में 2,86,875 हितग्राहियों को एकीकृत ग्रा० वि० कार्यक्रम और 18,360 हितग्राहियों को स्वरोजगार प्रशिक्षण योजना के लिए तैयार किया जाएगा और इसके लिए अनुदान के रूप में 3672.00 लाख रु० और ऋण के रूप में 9180.00 लाख रु० की व्यवस्था की जाएगी।

राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम

राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम केन्द्र प्रवर्तित कार्यक्रम है जो मध्य प्रदेश में जनवरी 1981 में प्रारंभ किया गया है। इसका उद्देश्य ग्रामीण क्षेत्रों में अतिरिक्त रोजगार उपलब्ध कराना तथा जिस मौसम में कृषि कार्यों में मंदी रहती है उस समय ग्रामीणों को रोजगार दिलाना है।

राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम के अन्तर्गत ग्रामीण विकास विभाग द्वारा पूर्व में चलाई गई निम्नलिखित योजनाओं को भी सम्मिलित किया गया है और इसके अन्तर्गत लिए गए नवीन तथा वर्तमान में अपूर्ण कार्यों को प्राथमिकता के आधार पर पूर्ण कराया जा रहा है:—स्थानीय विकास कार्यक्रम, ग्रामीण रोजगार आश्वासन योजना, राहत कार्य ग्रामीण विकास विभाग द्वारा चलाई गई किन्हीं अन्य योजनाओं के कार्य। इस कार्यक्रम के द्वारा अनुसूचित जाति/जनजातियों को मूलभूत सुविधाएं प्रदान करने और लघु सिंचाई, भू-संरक्षण, पेयजल कूप और सामाजिक वानिकी को उच्च प्राथमिकता दी गई है। इस संबंध में यह अवश्य ध्यान में रखा जाता है कि निर्माण कार्य ऐसे हों जो क्षेत्र की स्थिति को देखते हुए जनोपयोगी हों और वर्तमान ही नहीं भविष्य के लिए भी स्थायी संपत्ति के रूप में उपयोगी रहें। निर्माण कार्य तैयार होने के पश्चात् पंचायतों को सुपुर्द कर दिये जाते हैं जो भविष्य में उनके रख-रखाव की व्यवस्था करती हैं। राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम के आबंटन का 10 प्रतिशत भाग ऐसे कार्यों पर खर्च किया जाता है जिससे हरिजन-आदिवासियों को प्रत्यक्ष लाभ मिले। इस प्रयोजन से वन विभाग को सामाजिक वानिकी के लिए 10 प्रतिशत आबंटन दिया जाता है। इस कार्यक्रम के अन्तर्गत स्थानीय संस्थाओं (पंचायतों) का सक्रिय योगदान रहता है क्योंकि कार्यक्रम का क्रियान्वयन इन्हीं अभिकरणों पर निर्भर है। जिला स्तर पर विभाग के जिला विकास अधिकारी पदस्थ हैं जो जिला ग्रामीण विकास अभिकरण के अन्तर्गत कार्य करते हैं।

वर्ष 1981-82 में यह कार्यक्रम केन्द्र और राज्य सरकार के बीच 50:50 के आधार पर चलाया जा रहा है। वर्ष 1981-82 में इस कार्यक्रम के लिए कुल प्रावधान 29,94,28,000 रुपये रखा गया। इसमें से लगभग उतनी ही राशि समस्त संभागों को आबंटित की जा चुकी है जिसका पूर्ण व्यय संभावित है। राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम के अन्तर्गत निर्माण कार्य स्थानीय परिस्थितियों और आवश्यकताओं को देखते हुए लिए जाते हैं, कार्य बड़े भी हो सकते हैं तथा छोटे भी अतः पहले से यह बताना संभव नहीं होगा कि योजना में कौन से और कितने कार्य लिए जा सकेंगे तथा उनमें से प्रत्येक पर कितना खर्च होगा। साथ ही यह कह सकना भी कठिन होगा कि किस माह में कौन से कार्य हो सकेंगे। इसलिए इसका माहवारी लक्ष्य निर्धारित करना व्यावहारिक नहीं होगा।

राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम की शुरूआत बहुत अच्छे ढंग से हुई है और ग्रामीण समाज के सामाजिक आर्थिक पुनर्निर्माण का यह सबसे कारगर कार्यक्रम है। शीघ्र ही इसके लाभदाई परिणाम ग्रामीण परिवेश में दिखाई देने लगेंगे। □

ग्रामीण महिलाओं के लिए धुआं रहित चूल्हे व अन्य सुविधाएं

जी० सी० माथुर

ग्रामीण महिलाओं का सामाजिक उत्पादन कार्य में अधिकांश योगदान होने पर भी उनकी कठिनाइयों को कम करने की दिशा में अधिक कुछ नहीं किया गया है। यद्यपि हमने विज्ञान तथा तकनीकी के क्षेत्र में काफी प्रगति कर ली है लेकिन ग्रामीण महिलाओं की परिस्थितियों में कोई सुधार नहीं हुआ है। आज भी ग्रामीण महिलाओं को पीने के पानी के लिए घरों से दूर कुंओं, तालाबों या नदियों पर जाना पड़ता है और जो जल वे पीते हैं, वह स्वास्थ्यप्रद नहीं होता। अधिकतर ग्रामीण घरों में शौचालय और स्नानघर नहीं हैं। उन्हें शौच के लिए गांव के नज़दीक के खेतों में जाना पड़ता है और स्नान रहने के कमरे या खुले आंगन में करना पड़ता है। ग्रामीण मकानों में रसोई बनाने के लिए भी उचित स्थान का प्रबंध नहीं है जिससे महिला को पुराने परम्परागत धुआं उगलते हुए चूल्हों पर खाना बनाना पड़ता है जो उनकी और बच्चों की आखों एवं स्वास्थ्य के लिए हानिकारक हैं।

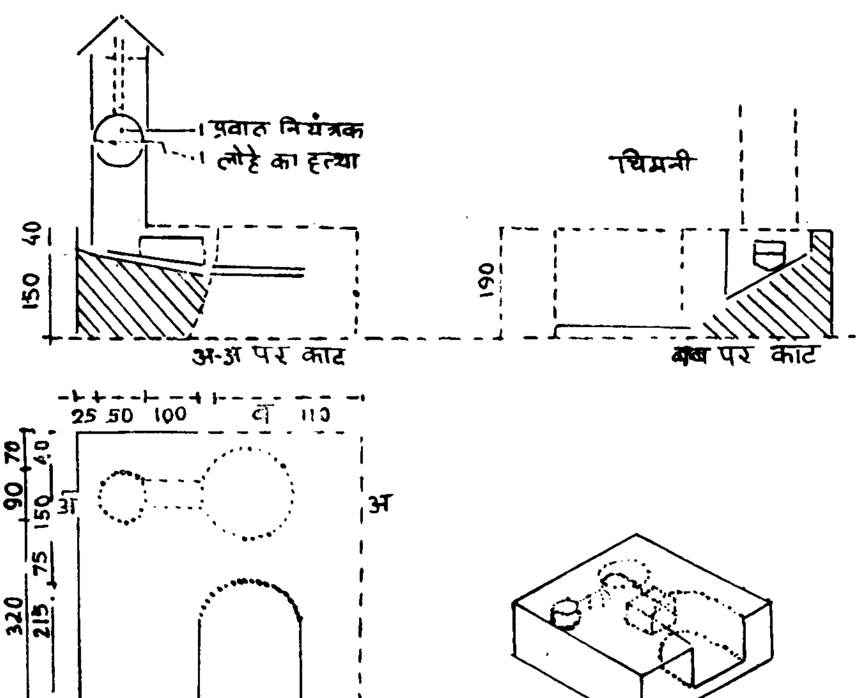

उन्नत किस्म का धुँआ रहित चूल्हा

अधिकांश ग्रामीण मकानों में बिजली का प्रबंध भी नहीं है और महिलाओं को अपना घरेलू कार्य अपर्याप्त रोशनी में ही करना पड़ता है। इनके लिए ऐसी रोशनी में घरों से निकलना रात में असुरक्षित रहता है।

अतः ग्रामीण क्षेत्रों में महिलाओं के लिए अनिवार्य सेवाओं, सामुदायिक सुविधाओं, जन सुविधाओं से संबंधित विशेष आवश्यकताओं का पता लगाना महत्वपूर्ण है।

राष्ट्रीय भवन निर्माण संगठन ने ग्रामीण महिलाओं की इन कठिनाइयों को कम करने के लिए उन की विशेष आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए पर्यावरणीय सुधारों सहित कम लागत के प्रदर्शनिक मकान बनाए हैं जिनमें उपयुक्त तकनीकियों को काम में लाया गया है। एन० बी० ओ० द्वारा विकसित की गई कुछ मुख्य तकनीकियों का संक्षिप्त उल्लेख नीचे किया गया है।

1 धुआं रहित चूल्हा

देहातों में महिलाएं खुले स्थान या रहने के कमरे में ही खाना पकाती हैं। खाना पकाने के लिए अलग रसोई किसी विरले घर में ही बनी होती है और उसमें भी धुआंदार चूल्हा होता है जिसमें उचित धुआंकश या चिमनी की व्यवस्था नहीं होती है तथा उसमें आसानी से काम करने या घरेलू सामान रखने की भी उचित व्यवस्था नहीं होती है।

स्वास्थ्य की दृष्टि से यह जरूरी है कि रसोई बनाने के लिए अलग स्थान हो जिसमें धुआं निकले और ताजी हवा आने का उचित

साधन हो। खाना पकाने/रसोई के लिए पर्याप्त और रोशनीदार जगह होनी चाहिए। रसोई की स्थिति इस प्रकार होनी चाहिए जिससे मकान का वातावरण दूषित न हो।

ग्रामीण क्षेत्र में जन-स्वास्थ्य के लिए धुआं अपदूषण एक बड़ी समस्या है जिससे न केवल पर्यावरण ही दूषित होता है बल्कि इससे महिलाओं में कई भयानक बिमारियां भी उत्पन्न हो जाती हैं।

ग्रामीण घरों में कई प्रकार के चूल्हों का उपयोग किया जाता है लेकिन ईंधन की खपत और धुआं निकलने की दृष्टि से ये उपयुक्त नहीं हैं। यदि इन चूल्हों की तापीय क्षमता में सुधार किया जाए तो अनुमान है कि देश में उपयोग होने वाले कुल 20 करोड़ टन कोयले की खपत का 1/10 भाग ईंधन ऊर्जा की बचत हो सकती है। इसके अतिरिक्त, भारतीय महिलाओं का अधिकांश समय रसोई में व्यतीत होता है। इसलिए चूल्हा ऐसा होना चाहिए जिससे उन्हें और असुविधाजनक परिस्थितियों से छुटकारा मिल सके।

राष्ट्रीय भवन निर्माण संगठन ने धुआं रहित चूल्हे का एक उन्नत डिज़ाइन तैयार किया है जिससे न केवल वातावरण शुद्ध रहेगा बल्कि ईंधन की खपत में भी बचत होगी। धुआंरहित चूल्हे का डिजाइन देश के विभिन्न क्षेत्र में बने प्रदर्शनिक मकानों में शामिल किया गया है। इसके विवरण अनुलग्नक–1 में दिए गए हैं।

2 स्वच्छ शौचालय

अधिकतर ग्रामीण मकानों में स्वच्छ शौचालय नहीं हैं और महिलाओं को शौच के लिए गांव के नजदीक के खेतों में जाना पड़ता है। इससे गांव का पर्यावरण दूषित होता है। वर्षा के दिनों में शौच के लिए खेतों में जाना भी बड़ा असुविधाजनक रहता है।

पर्यावरणीय स्वच्छता के लिए मल का उचित रूप से निपटान करना बहुत महत्वपूर्ण है। मनुष्यों में आन्त्रिक रोगों का सामान्य होने से एक बीमार व्यक्ति द्वारा खुले स्थान में मल त्यागने से उसके कीटाणु संप्रेषित होते हैं। मल का उचित ढंग से निपटान न करने से बीमारी के किटाणु, मक्खियों, पीने के पानी, खाद्य पदार्थों या मिट्टी से अन्य व्यक्तियों तक पहुंच जाते हैं।

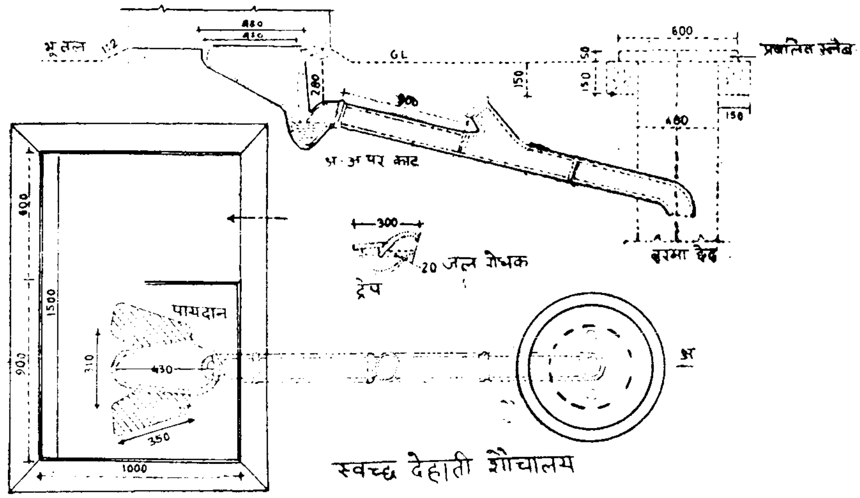

स्वच्छ देहाती शौचालय

मल संग्रहण तथा निपटान का सबसे अच्छा तरीका सीवर पद्धति है। लेकिन गांवों में इस का प्रबन्ध करना संभव नहीं है। क्योंकि इस पर अत्यधिक खर्च आता है, दूसरा तरीका सैप्टिक टैंक की व्यवस्था करना है लेकिन इस पर भी काफी खर्च होता है जो ग्रामीणों की सामर्थ्य से बाहर है। अतः मानवीय रोगों की रोकथाम के लिए स्वच्छ शौचालय और एक निपटान पिट बनाना ही सबसे सस्ता और प्रभावी तरीका है जिसको ग्रामीण आसानी से बनवा सकते हैं।

भारत में विभिन्न संगठनों द्वारा शौचालयों के कई निर्माण विकसित किए गए हैं। राष्ट्रीय भवन निर्माण संगठन ने जल-रोक ट्रप वाली टट्टी की सिफारिश की है जिसका निर्माण आसानी से किया जा सकता है और इसके स्वक्षालन के लिए केवल दो लीटर पानी की आवश्यकता होती है। इसका कार्य संतोषजनक पाया गया है। इस किस्म की टट्टी की रचना अनुलग्नक–2 में दी गई है।

उन स्थानों में जहां प्रक्षालन के लिए पानी का उपयोग नहीं किया जाता या पानी की कमी है वहां एक गहरे गड्ढे के ऊपर सीमेंट कंक्रीट की एक छेद वाली चौकी से यह समस्या हल की जा सकती है।

शौचालय को उपयुक्त स्थान पर बनाना भी महत्वपूर्ण होता है क्योंकि अनुपयुक्त स्थान पर बने शौचालय से पर्यावरण दूषित हो जाता है। शौचालय को रसोईघर से उचित दूरी पर होना चाहिए जिससे हानिकारक किटाणु रसोईघर तक न पहुंच सकें। ऊंचे स्थान पर बनी टट्टी की दूरी पीने के पानी के कुएं से कम से कम 15 मीटर होनी चाहिए।

गोबर गैस संयंत्र

सामान्यतः जानवरों के गोबर से जलाने के लिए उपले बनाए जाते हैं जिनको जलाने से न केवल घर और गांव का पर्यावरण ही दूषित होता है बल्कि कृषि भूमि भी उत्तम कार्बनिक खाद से वंचित रह जाती है। जानवरों के गोबर में ऐसे तत्व होते हैं जिनका ईंधन और खाद के लिए अलग-अलग उपयोग किया जा सकता है।

जानवरों के गोबर में उपलब्ध खाद के गुणों की इस अत्यधिक बरबादी को वातनिरपेक्षी किण्वन की सरल तकनीक के द्वारा इसके ईंधनीय अंश का अधिकतम उपयोग करके रोका जा सकता है। वातनिरपेक्ष किण्वन के दौरान एक गैस उत्पन्न होती है जिसे संग्रहित करके उसका आसानी से ईंधन के रूप में उपयोग किया जा सकता है।

महिलाओं के लिए परम्परागत रूप से से उपले या लकड़ी जलाने की तुलना में गोबर गैस अधिक उपयोगी है क्योंकि इससे उनके स्वास्थ्य को धुएं से होने वाली हानि से छुटकारा मिल जाता है और गोबर गैस जलने में उत्तम होती है तथा इससे धुआं भी नहीं निकलता है।

3 जल-आपूर्ति

महिलाओं को पीने का पानी नदियों, तालाबों या कुओं से लाने के लिए काफी दूर जाना पड़ता है। रेगिस्थानी क्षेत्रों में यह दूरी दो से पांच किलोमीटर तक हो सकती है। नदियों और तालाबों का पानी स्वास्थ्यप्रद भी नहीं होता है। स्वास्थ्य जीवन के लिए साफ

और पर्याप्त जल की व्यवस्था करना एक बुनियादी आवश्यकता है। बिना पानी के वातावरण को स्वच्छ रखना नामुमकिन है। सारे विश्व में सफाई की व्यवस्था पानी के साथ जुड़ी हुई है।

यह तो सर्व विदित है कि भारत के ग्रामीण क्षेत्रों में हैजा, टाइफाइड और पेचिस जैसी आन्त्र रोगों का मुख्य कारण अस्वच्छ पानी का उपयोग करना है। इन रोगों की रोकथाम की जा सकती है यदि लोगों को सुरक्षित पेयजल उपलब्ध किया जा सके। अतः ग्रामीण क्षेत्रों में स्वच्छ पेयजल उपलब्ध करना जन स्वास्थ्य कार्यक्रम का महत्वपूर्ण अंग है।

ग्रामीण जल-आपूर्ति के मुख्य उद्देश्य निम्नलिखित हैं :—

(क) सुरक्षित और स्वास्थ्यकर जल-आपूर्ति

(ख) पर्याप्त मात्रा में जल आपूर्ति करना

(ग) उपभोक्ताओं को आसानी से जल उपलब्ध करना जिससे व्यक्तिगत एवं घरेलू स्वच्छता में वृद्धि हो हो सके।

जल आपूर्ति के साधन

प्राचीन काल से ही समुदायों का विकास पानी के निकट ही होता आया है। जल-आपूर्ति के इन साधनों को यथासंभव सीमा तक बढ़ाया जाना चाहिए। हमारे गांवों में आमतौर पर पानी की प्राप्ति के निम्नलिखित में से एक या दो साधन होते हैं :—

(क) कुएं

(ख) नदी या नहर

(ग) तालाब या टंकी

(घ) झरने

कुएं शताब्दियों से जल आपूर्ति के साधन रहे हैं लेकिन यह दुर्भाग्यपूर्ण है कि ये कुएं ऊपर और नीचे से भली प्रकार से ढके/सुरक्षित नहीं रखे जाते हैं। पानी की उपलब्धि के ये उत्तम साधन हो सकते हैं यदि उनके पानी का असर अच्छा हो और उसमें हानिकारक नमक न हो। वर्ष भर बहने वाली नदियां और नहरें भी जल-आपूर्ति के अच्छे साधन हो सकते हैं यदि ऊपर नजदीक में कहीं उसमें प्रदूषण न किया जाता हो। तालाब और टंकियां जिनके दूषित होने का सदैव डर रहता है, कई दक्षिणी राज्यों जैसे मद्रास आदि में पेय जल के मुख्य साधन हैं झरनों के रूप में जल-आपूर्ति बहुत कम स्थानों में उपलब्ध है लेकिन इनको काफी कम लागत से उत्तम पेय जल-आपूर्ति के साधन में बदला जा सकता है।

4. ग्रामीण विद्युतीकरण

अधिकांश गांवों में बिजली का प्रबन्ध नहीं है जिससे वहां रात को पूर्ण अंधेरा रहता है। इसलिए गांवों में रात में विशेषतः महिलाओं का आना-जाना पूर्ण रूप से बंद रहता है और उन्हें अपने घर में अंदर ही रहना पड़ता है। इससे केवल उन्हें ही असुविधा नहीं होती बल्कि चोर-डाकू जैसे अन्य किस्म के असामाजिक तत्वों को पनपने का अच्छा अवसर मिलता है। गांवों में जानवरों की चोरी होना आम बात है अतः ग्रामीणों तथा उनकी वस्तुओं की सुरक्षा के लिए बिजली का होना आवश्यक है।

ग्रामीण विद्युतीकरण को दो श्रेणियों में विभक्त किया जा सकता है– घरेलू कार्य जैसे घर के अन्दर रोशनी, पंखा तथा अन्य उपकरणों के लिए और दूसरा कृषि एवं उद्योगों के लिए।

कई ग्रामीण गतिविधियों में बिजली के उपयोग से आर्थिक वृद्धि की जा सकती है। इसलिए गांवों में बिजली का प्रबन्ध करने पर विशेष ध्यान देना चाहिए जिससे खेतों तथा घरों में बिजली के उपकरणों से उत्पादन बढ़ाया जा सके।

ग्रामीण घरों में बिजली का होना महिलाओं के लिए एक वरदान सिद्ध होगा क्योंकि उन्हें अपर्याप्त रोशनी और धुंएदार स्थान पर खाना बनाना पड़ता है। ग्रामीण क्षेत्रों में कुटीर एवं लघु उद्योग लगाने के लिए भी विद्युतीकरण जरूरी है।

5. मकानों के टिकाऊपन में सुधार

गांवों में विद्यमान मकानों की उचित रूप से मरम्मत तथा रख-रखाव के द्वारा उनके टिकाऊपन में वृद्धि करने की काफी गुंजाइश है। मकानों की आवश्यकतानुसार मरम्मत करके उनकी आयु में वृद्धि की जा सकती है। इस काम को महिलाएं अपने खाली समय में सरलता से कर सकती हैं। फर्श का रखरखाव गोबर और मिट्टी से किया जा सकता है तथा दीवारों को मिट्टी के पलस्तर से अधिक टिकाऊ बनाया जा सकता है। अधिकांश ग्रामीण महिलाएं अपना समय घर में व्यतीत करती हैं इसलिए मकान के रख-रखाव की जिम्मेदारी पुरुषों की तुलना में उन पर अधिक निर्भर करती है।

भारत के ग्रामीण क्षेत्रों में छत के लिए सबसे अधिक उपयोग होने वाली सामग्रियों में छप्पर (कांश) एक है। कांश एक किस्म की घास होती है जो बहुतायत में स्थानीय रूप से उपलब्ध हो जाती है और उसको सुखाकर छत डालने में काम में लाया जाता है। यह अति ज्वलनशील पदार्थ है जिस पर आग लगने की दशा में आस-पास के मकान भी जल जाते हैं और सारा मुहल्ला ही बेघर हो जाता है।

छप्पर एक कार्बनिक पदार्थ होता है जो शीघ्र ही नष्ट हो जाता है। अधिक वर्षा वाले क्षेत्रों में इसे लगभग हर साल बदलना पड़ता है। यह कीड़ों से भी नष्ट हो जाता है।

छप्पर का उचित रूप से उपचार करके इसकी आयु में वृद्धि की जा सकती है जिससे इसके रख-रखाव या बार-बार बदलने की समस्या कम की जा सकती है।

राष्ट्रीय भवन निर्माण संगठन छप्पर के अग्निरोधी तथा जलपकार्षण उपचार की तकनीक का प्रचार कर रहा है। इस उपचार में छप्पर की ऊपरी और निचली सतह पर अग्निरोधी और जलाअपकर्षी लेप लगाया जाता है। इसे विशेष रूप से तैयार मिट्टी तथा बिटुमन को उचित अनुपात में मिलाकर तैयार किया जाता है। इस प्रकार तैयार की गई मिट्टी को पलस्तर के रूप में लगाया जाता है और ऊपर से गोबर का लेप किया जाता है। इसके पश्चात मिट्टी के तेल और बिटुमन के घोल का उपचार किया जाता है। □

निदेशक
राष्ट्रीय भवन निर्माण संगठन, नई दिल्ली

गांवों में महिलाओं के लिए लाभदायक रोजगार

कुमारी एम० गोविलकर,
संयुक्त निदेशक (महिला कार्यक्रम),
विस्तार निदेशालय, नई दिल्ली

सन् 1981 की जनगणना के अनुसार भारत की जनसंख्या 68 करोड़ 38 लाख 51 है जिसमें लगभग 33 करोड़ 4 लाख 62 हजार 8 सौ 2 महिलाएं हैं जो कि कुल जनसंख्या का लगभग 48 प्रतिशत है। इस जनसंख्या में 80.92 प्रतिशत महिलाएं गांवों में रहती हैं और छोटे, सीमांत और भूमिहीन किसान परिवारों की हैं। 58.2 प्रतिशत ग्रामीण कार्यक्रम महिलाएं उस वर्ग की हैं जिन्हें कामकाज के लिए एक स्थान से दूसरे स्थान को जाना पड़ता है। अनुमान है कि सन् 1985 में भारत की जनसंख्या अनुमानित वर्तमान 2.52 से 2.43 प्रतिवर्ष वृद्धि दर के हिसाब से 78 करोड़ 29 लाख हो जाएगी।

जहां तक साक्षरता का सवाल है, महिलाओं में मुश्किल से 18 से बढ़कर यह 24 तक पहुंच पाई है जबकि यह वृद्धि दर पुरुषों में कहीं ज्यादा है। लड़कियों के मामले में तो 63 प्रतिशत लड़कियां प्राइमरी कक्षाओं में ही पढ़ना छोड़ देती हैं और 70 प्रतिशत मिडिल तक पहुंचते पहुंचते। यह जरूरी है कि जब योजनाएं तैयार की जाएं तो हम गांवों और शहरों की महिलाओं की सामाजिक-आर्थिक और सामाजिक-सांस्कृतिक अड़चनों को भी ध्यान में रखें। योजनाएं तैयार करते समय प्रायः इन बातों को नजरंदाज कर दिया जाता है। कई अध्ययनों से पता चला है कि गांवों की महिला मजदूरों की घरेलू आय 156 प्रतिशत बढ़ गई है जबकि पुरुषों की आय में 131 प्रतिशत ही वृद्धि हो पाई है और यह वृद्धि दर तो तब है जबकि महिलाओं को पुरुषों की अपेक्षा कम मजदूरी दी जाती है। घरेलू आमदनी में जो बढ़ोतरी होती है उसमें से अधिकांश पैसा उनके परिवारों के पोषण व शिक्षा के स्तरों को सुधारने में खर्च हो जाता है। इस दिशा में विश्व बैंक ने भी अध्ययन किया है और पता चला है कि भारत की शिक्षा प्रणाली आर्थिक रूप से लाभकारी नहीं है और अगर इसे कारगर बनाना है तो उत्पादन संबंधी प्रौद्योगिकी (टैकनालाजी) को पाठ्यक्रम में शामिल किया जाना चाहिए।

छठी योजना में ग्रामीण महिलाओं को लक्ष्य में इसलिए रखा गया है कि वे आर्थिक दृष्टि से सक्रिय कार्यशक्ति समझी जाती हैं, परन्तु उनके लिए कोई विशेष बजट की व्यवस्था नहीं की गई ताकि उनका सामाजिक-आर्थिक स्तर सुधारा जा सके। 1974 के आंकड़ों के अनुसार खेतीबाड़ी में काम करने वाली महिलाओं की संख्या पुरुषों से अधिक है। बोवाई, रोपाई, निराई गुड़ाई, कटाई जैसे खेतीबाड़ी के खास-खास काम प्रायः महिलाएं ही करती हैं और फसल की कटाई के बाद वे ही अनाज के भंडारण का दायित्व संभालती हैं।

ग्राम विकास में एन० जी० ओ० की भूमिका को भी स्वीकार किया जाता है परन्तु इसने कोई विशेष महत्वपूर्ण काम नहीं किया। हां इतना जरूर है कि इन व्यापारी संस्थाओं को आयकर में छूट देने की व्यवस्था की है।

यद्यपि महिलाओं को और अधिक प्रशिक्षण देने की आवश्यकता है और उन्हें ऐसी प्रौद्योगिकियों में नई-नई जानकारियां देने की जरूरत है जिनमें वे महत्वपूर्ण भूमिकाएं अदा करती हैं, फिर भी राष्ट्रीय कृषि आयोग की सिफारिशों के बावजूद उन्हें अमल में नहीं लाया गया। महिलाएं इन कार्यों में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती हैं जैसे अनाज, फल व सब्जियां, अंडे, मांस व मछलियों, चारा और इंधन के उत्पादन, सफाई-छंटाई आदि। आज की दुनिया में विज्ञान और प्रौद्योगिकी ऐसे विषय हैं जिनमें एक तरफ तो अधिक रोजगार के अवसर पैदा किए जाते हैं और दूसरी तरफ हम घिसे-पिटे जी उबा देने वाले तौर तरीकों से छुट्टी पाते हैं। आई० सी० डी० एस० जैसी प्रायोजनाएं (200 खंड) और कुछ जिलों में 241 ग्राम कार्यरत साक्षरता प्रायोजनाएं काम कर रही हैं और इनको एक-एक काम सौंपा गया है जैसे आई० सी० डी० एस० का दायित्व बालविकास है और आर० एफ० एल० पी० का है साक्षरता। इन संस्थाओं के कार्यकलाप को बढ़ाने की आवश्यकता है। विशेषरूप से ये दो विषय और जोड़े जाने चाहिए—एक तो कटाई के बाद वाली प्रौद्योगिकी और दूसरे ऊर्जा प्रबन्ध (बायो गैस प्रौद्योगिकी, सामाजिक वानिकी और सौर ऊर्जा)।

अभी तक हमारे देश में सामाजिक-आर्थिक विकास की दिशा में महिलाएं निर्णय नहीं लेतीं क्योंकि उत्पादन क्षेत्र में प्रौद्योगिकी हस्तांतरण के लिए उन्हें नहीं पूछा जाता।

इसी कारण महिलाओं के आर्थिक विकास में बाधा पहुंची है। महिलाओं का सामाजिक-आर्थिक स्तर ही गिरा हुआ नहीं है बल्कि उनके स्वास्थ्य का स्तर भी खराब है और इसका नतीजा

यह होता है कि छोटे बच्चों की मृत्युदर भी अधिक होती है। कई बच्चे प्रसूति में मर जाते हैं। इन सबका अप्रत्यक्ष परिणाम जन्म दर की वृद्धि है।

महिलाओं के लिए प्रौद्योगिकी

नीचे लिखे चार ऐसे काम हैं जिनमें कि महिलाओं को प्रौद्योगिकी की जानकारी दी जा सकती है :—

उत्पादन प्रौद्योगिकी :—उत्पादन प्रौद्योगिकी में बुनियादी चीज है भूमि की मलकीयत यानी स्वामित्व, साथ ही यह भी महत्वपूर्ण है कि विभिन्न कृषि प्रणालियों को अपनाने में महिलाएं क्या भूमिका अदा कर रही हैं ? अनाज, कन्दवर्गीय फसलों, फलों व सब्जियों का उत्पादन बढ़ाने में, भूमि का होना तो है ही सबसे जरूरी। अनेक विकास कार्यक्रमों के बावजूद अभी तक महिलाओं तक नई प्रौद्योगिकी नहीं पहुंच पाई और इसलिए छोटे और सीमान्त किसान इस योग्य नहीं बन पाए कि उनमें परिवार के गुजारे के लायक पैदावार ली जा सके, वे अपना धंधा खुद कर सकें या गरीबी की रेखा से ऊपर उभर सकें। शहरों के निरन्तर फैलाव से और नगदी व खाद्य फसलों के अधिक उगाए जाने से जमीन की कमी महसूस की जा रही है। महिलाओं को इन विषयों में नई तकनीकी की जानकारी दी जा सकती है :—कृषि, बागवानी और पशुपालन।

उत्पादन सहायक प्रौद्योगिकी :—उत्पादन तब तक नहीं किया जा सकता जब तक कि सहायक प्रौद्योगिकियों को काम में न लाया जाए। सहायक प्रौद्योगिकी के ये क्षेत्र हैं विद्युत उत्पादन, निवेशों का विकल्प और पारिस्थितिकी प्रणाली को ध्यान में रखना।

बायोगैस प्रौद्योगिकी :—बायोगैस प्रौद्योगिकी से महिलाओं को न केवल पुराने चूल्हे से छुट्टी मिलेगी बल्कि उन्हें बेहतर खाद भी मिलेगी। गोबर-कचरे का इस्तेमाल तो बायोगैस बनाने में होगा ही और जो अवशिष्ट पदार्थ होगा उससे बेहतर खाद मिलेगी। हमारे देश में बायोगैस प्रौद्योगिकी का तो हाल में ही विकास हुआ है। लेकिन अगर यह प्रौद्योगिकी गांव-गांव तक पहुँचती है तो गांवों के परिवारों को बहुत फायदा पहुँचेगा। इसके लिए गांवों की महिलाओं को जानकारी देना जरूरी है। उन्हें यह भी बताना होगा कि इन नए चूल्हों की साज-संभाल कैसे होती है। इससे न केवल उत्पादन में वृद्धि होगी बल्कि उन लोगों की जीवन प्रणाली में भी सुधार होगा। अभी तक मुश्किल से 80,000 बायोगैस संयंत्र इस्तेमाल हो रहे हैं जबकि 90 लाख मौजूद हैं। कई संयंत्र तो बेकार पड़े हैं। वजह यही है कि महिलाओं में इनके प्रति कोई दिलचस्पी नहीं जगाई गई। यह बात भी सिद्ध हो चुकी है कि कृषि विश्वविद्यालयों के पास जो प्रयोगशालाएं हैं उनके पास संयंत्र लगाने से प्रतिदिन तीन से चार लीटर पैट्रोल या मिट्टी के तेल की बचत हो सकती है। जिन प्रयोगशालाओं में पैट्रोल या मिट्टी का तेल प्रयोग किया जा रहा है, अगर वहां बायोगैस संयंत्र लगा दिए जाएं तो पैट्रोल की बहुत कुछ बचत की जा सकती है। इस तरह से हम बाहर से मंगाए जाने वाले रासायनिक उर्वरक, विशेषरूप से यूरिया पर खर्च होने वाली विदेशी मुद्रा की भी काफी बचत कर सकते हैं।

जैव उर्वरक :—यह भी एक ऐसी प्रौद्योगिकी है जिसमें महिलाएं महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर सकती हैं। इस प्रौद्योगिकी का संबंध स्थान विशेष व मौसम विशेष से है लेकिन इसमें ऐसी क्षमता है कि इससे साल भर में 3 से लेकर 6 महीने तक के लिए 50 रुपये से 100 रुपये माहवार तक की आमदनी ली जा सकती है। इसे धान उगाने वाले क्षेत्रों में अपनाया जा सकता है और इससे धान की उत्पादन लागत में भी कमी की जा सकती है। इस प्रौद्योगिकी को उत्तर प्रदेश के महिला मंडलों में सफलतापूर्वक अपनाया गया है। वहां किसान प्रशिक्षण केंद्रों में महिला कर्मचारियों को उपयुक्त प्रशिक्षण दिया गया।

सामाजिक वानिकी:—यह एक ऐसा विषय है जिसका महिलाओं से अब तक कोई सरोकार ही नहीं रहा। देहरादून, उत्तर प्रदेश में 4 से 9 दिसम्बर 1980 तक एक सम्मेलन आयोजित किया गया। इसका विषय था "सामुदायिक वानिकी में महिलाओं का योगदान"। उक्त सम्मेलन ने सिफारिश की थी कि सामुदायिक वानिकी कार्यक्रमों की योजना तैयार करने, प्रबन्ध, कार्यान्वयन के विभिन्न निर्णायक स्तरों पर महिलाओं को शामिल किया जाना चाहिए ताकि वे नर्सरियां तैयार करने व सामुदायिक वृक्षारोपण में सक्रिय भाग ले सकें क्योंकि इन क्षेत्रों में महिलाएं पुरुषों की अपेक्षा बेहतर काम कर सकती हैं, देख-रेख के कामों में, विशेषरूप से वानिकी गतिविधियों में और अधिक महिलाओं का सहयोग लेना चाहिए। यह अनुभव किया गया है कि पुरुषों व महिलाओं को दी जाने वाली मजदूरी में भेदभाव बढ़ता जाता है। विशेषरूप से इस क्षेत्र में महिलाओं के प्रति उपेक्षा बरती जाती है। इन लोगों के लिए इस क्षेत्र में रोजगार मिलने की अच्छी खासी गुंजाइश है। इस मामले में, गुजरात व उत्तर प्रदेश जसे राज्य को छोड़ कर जहां कि पहाड़ी इलाकों में "चिपको आंदोलन" चला था, अन्यत्र पारिस्थितिकी प्रणाली की देखरेख के कार्य में महिलाओं को रखा जा सकता है।

कटाई के बाद की प्रौद्योगिकी—संसाधन व संरक्षण के लिए सहायक प्रौद्योगिकी:—सन् 1962 से विस्तार निदेशालय के गृह विज्ञान व पोषण शिक्षा अनुभाग ने घरेलु स्तर पर महिलाओं के लिए कटाई के बाद की प्रौद्योगिकी की गतिविधियां—अनाज का वैज्ञानिक भंडारण शुरू की हैं। इस कार्यक्रम के अंतर्गत 46 ग्राम सेविका प्रशिक्षण केन्द्रों और 150 कृषक प्रशिक्षण केन्द्रों में प्रयोग के लिए अपनाए गए गावों में सर्वेक्षण किया गया ताकि यह पता लगाया जा सके कि भंडारण में अनाज की कितनी हानि होती है। उस समय इस हानि को लगभग 28 प्रतिशत आंका गया। ग्राम सेविकाओं ने प्रदर्शन आयोजित किए और सिद्ध किया कि विभिन्न फफूंदनाशी दवाओं जैसे ई० जी० बी० और ई० डी० सी० टी० के प्रयोग से किस तर भंडारित अन्न की हानि को कम किया जा सकता है। इस कार्यक्रम के अन्तर्गत टीन के भंडारण बक्सों की बिक्री भी रियायती दरों पर की गई। संक्षेप में, इस पूरे काम को विस्तार निदेशालय के गृह विज्ञान व पोषण शिक्षा अनुभाग की सहायता से किया गया जिसमें कि उसके

महिला कर्मचारियों ने काम किया । इस प्रौद्योगिकी से हमारे देश में न केवल अनाज में आत्मनिर्भरता में ही मदद मिल रही है बल्कि इस से विदेशी मुद्रा की भी बचत हो रही है । इस अभियान का ध्येय यह रखा गया—"अनाज बचाने का मतलब अनाज पैदा करना है" । इतना ही नहीं स्वस्थ अनाज के मिलने से लोगों को उनके आहार में ज्यादा कैलोरी मिलती है और इस प्रकार उनका भोजनस्तर भी सुधरता है । इस कार्यक्रम से एक फायदा और हुआ । वह यह है कि रोगग्रस्त अनाज में डी० डी० टी० और बी० एच० सी० मिलाने का रिवाज खत्म होता जा रहा है । महिलाओं के समय की भी बचत होती है और उन्हें 4 से 6 सप्ताह का अतिरिक्त समय भी मिल जाता है ।

दक्षिण एशियाई देशों में भारत की गिनती उन महत्वपूर्ण विकासशील देशों में है जो कि अनाज की पैदावार में आत्मनिर्भरता की ओर बढ़ रहे हैं । खाद्यान्नों में कुल 40 प्रतिशत की कमी का कारण बंगलादेश, भारत, कोरिया और मिश्र हैं । 1985 के मूल्यों के बारे में विश्व बैंक की भविष्यवाणी के अनुसार बाहर से मंगाए जाने वाले अनाज का मूल्य 28 लाख डालर होगा जबकि निर्यात से मिलने वाली अनुमानित आय लगभग 9 अरब 50 करोड़ डालर होगी । अनाज आयात करने की मांग के पीछे मुख्य रूप से आबादी का बढ़ना, आय और आय का वितरण है । यदि खेती में 2.5 प्रतिशत की वृद्धि दर जारी रहती है, तो भी खाद्यान्न आयात में भारत की निर्भरता जो कि 1974 में 7 प्रतिशत थी, सन् 1985 में बढ़कर 13 प्रतिशत यानी लगभग दूनी हो जाएगी । आयात का मूल्य भी अमरीकी डालर में 1 अरब 66 करोड़ 10 लाख होगा ।

किसानों और किसान महिलाओं ने यह सिद्ध कर दिखाया है कि यदि उन्हें ठीक मौका मिले, तकनीकी जानकारी दी जाए, निवेशों की सप्लाई मिल जाए तो वे करिश्में दिखा सकते हैं । पिछले तीस सालों में खाद्यान्नों का उत्पादन 5 करोड़ 50 लाख टन से बढ़कर 13 करोड़ 4 लाख टन हो गया है । पैदावार का लगभग 10 प्रतिशत नष्ट होता है यानी लगभग 1 करोड़ 30 लाख टन अनाज बरबाद हो जाता है । यद्यपि ग्राम महिलाओं को नई प्रौद्योगिकी की जानकारी दी जा रही है पर अब इस काम को और तेजी से बढ़ाना है ।

खाद्यान्न प्रौद्योगिकी के अन्तर्गत कन्दवर्गीय खाद्यान्नों, फलों और सब्जियों का परिरक्षण व प्रयोग आते हैं । इनका निर्जलीकरण, चयन व डिब्बाबंदी आदि की जाती है । जब किसानों के पास गैर-मौसम में काम कम होता है तब इन उत्पादों के प्रयोग के माध्यम से किसान पैसा कमा सकता है । वे लोग पापड़, वड़ी, चिप्स आदि तैयार कर सकते हैं बशर्ते कि पर्यटन विभाग इस माल को खरीदने का दायित्व संभाल ले । इस मामले में लिज्जत पापड़ का उदाहरण दिया जा सकता है । जब तक कि किसान को परिरक्षण और उपयोग से फायदा नहीं होता तब तक इसकी उपयोगिता पर हमेशा शक किया जाता रहेगा । कुछ समय पहले मैंने एक रुपया के डेढ़ किलो के हिसाब से आलू खरीदे जबकि इसी आलू से तैयार किए गए वैफर बाजार में 22 रु० किलो बिक रहे थे । विस्तार निदेशालय ने मशोबरा, हिमाचल प्रदेश में मूल व कन्दों की फसलकटाई के बाद की प्रौद्योगिकी पर आयोजित एक कार्यशाला में यह प्रदर्शित किया कि इस की लागत केवल 6 रुपये प्रति किलो पड़ती है । इसी प्रकार बेकरी का भी काम है जिसमें महिलाओं को रोजगार मिल सकता है बशर्ते कि उन्हें चीनी, मैदा, घी आदि उचित दरों पर मिल जाएं । अतीत में विस्तार निदेशालय ने गेहूं विशेषज्ञों के सहयोग से 50 से अधिक कार्यशालाएं आयोजित कीं ताकि गांव के लोगों में बेकरी को लोकप्रिय बनाया जा सके ।

दूसरे देशों में विकसित कुछ यंत्रों को अपनाने से मानव की शक्ति का दुरुपयोग बचाया जा सकता है । भारतीय किसान या ग्राम महिलाएं या तो सामान अपने सिर पर या टोकरों में भरकर ले जाती हैं । महिलाएं अपने-अपने घरों से गांवों की हाटों को सब्जियां, फल, ईंधन और दूसरी चीजें ढोती हैं । इतना ही नहीं, वे सामान तो ले ही जाती हैं, अपने बच्चे को भी कंधे पर साथ ले जाती हैं । आज भी अनुसूचित जाति की महिलाएं भारत के अनेक भागों में मल अपने सिरों पर ढो कर ले जाती हैं । इस तरह के काम बेचारी महिलाएं ही अधिकतर करती हैं । भारतीय समाज के लिए यह तो एक कलंक है ।

इस तरह की कई समस्याओं का समाधान हो सकता है बशर्ते कि इस प्रकार के सामान को ले जाने का कोई अच्छा विकल्प ढूंढा जा सके । कुछ साइकिलों या तीन पहिए वाली साइकिलों से ले जाई जाने वाली गाड़ियां तैयार की जा सकती हैं । इस बात का भी ध्यान रखना होगा कि इस तरह की गाड़ियां तैयार करने से बेरोजगारी की समस्या न खड़ी हो जाए ।

बुनियादी ढांचा

विस्तार निदेशालय निम्नलिखित योजनाओं को अमल में ला रहा है और उस बुनियादी ढांचे को जिसे कि पिछले तीन दशकों में तैयार किया गया, क्रियान्वित किया जा रहा है :—

1. महिला क्षेत्र कार्यकर्त्रियों और विस्तार प्रशिक्षण केन्द्रों के लिए (100 भाग लेने वाले व्यक्तियों के लिए साल भर में पाठ्यक्रम) छः हफ्ते का विषय वस्तु पुनश्चर्या (रिफ्रैशर) पाठ्यक्रम ।
2. महिला कर्मियों के लिए उच्च प्रशिक्षण—महिला क्षेत्र कार्यकर्त्रियों के लिए दो साल का डिप्लोमा कोर्स (25 व्यक्तियों के लिए एक कोर्स) ।
3. चुने हुए गाँवों में गृह विज्ञान विस्तार विभाग की स्थापना ।
4. देश के अन्दर किसानों का विनियम ।
5. निम्नलिखित क्षेत्रों में प्रशिक्षण चर्चा कार्यशालाएं [जोकि राज्यस्तरीय क्षेत्रों/महिलाओं अधिकारियों के लिए होंगी :—(क) खाद्यान्न, मूल व कन्दों की फसलकटाई के बाद

की प्रौद्योगिकी; (ख) बायोगैस प्रौद्योगिकी, सौर ऊर्जा, सामाजिक वानिकी और (ग) जैव उर्वरकों का उत्पादन और प्रयोग।

बुनियादी ढांचा

संस्था का नाम	संख्या
1. ग्रामसेवक प्रशिक्षण केन्द्र	83
2. ग्रामसेविका प्रशिक्षण केन्द्र	27
3. किसान प्रशिक्षण केन्द्र	137
4. कृषि विश्वविद्यालयों से सम्बद्ध गृह विज्ञान विभाग	8
5. भा० कृ० अ० प० के अन्तर्गत अनुसंधान संस्थान जिनका हम उपयोग कर रहे हैं।	30

जिन प्रशिक्षण योजनाओं को हम अमल में ला रहे हैं, यद्यपि उन सबका उद्देश्य उत्पादन संबंधी प्रौद्योगिकी को लोकप्रिय बनाना है ताकि किसान व उनकी महिलाएं अनाज, फल, सब्जियों, ऊर्जा के मामले में उत्पादन से फायदा उठा सकें और खाद व ऊर्जा के मामले में लाभान्वित हो सकें। इस बात के लिए भी प्रयत्न किए जा रहे हैं कि स्वास्थ्य, पोषण, पारिवारिक जीवन, शिक्षा व बाल विकास संबंधी विषयों पर ग्राम महिलाओं को प्रशिक्षण दिया जाए। इसके अतिरिक्त विभिन्न प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित किए जा रहे हैं। इस बुनियादी ढांचे के माध्यम से महिलाओं के प्रशिक्षण पर निगरानी रखी जाती है।

किसान समुदाय को प्रौद्योगिकी पहुंचाने यानी नई जानकारी से उन्हें अवगत कराने के लिए महिला मंडलों (60,000) तथा ग्राम महिलाओं के चर्चा मंडलों (7,000) का उपयोग किया जाता है। साधनों के उत्पादन और महिलाओं में जागरूकता पैदा करने की दृष्टि से इन कार्यों का बहुत प्रभाव पड़ा है।

अब समय का तकाजा है कि एक पूरा बुनियादी ढांचा राष्ट्रीय स्तर से लेकर सबसे नीचे के स्तर तक कारगर ढंग से काम करे। यदि राष्ट्रीय, राज्य, जिला, खंड और ग्राम स्तर पर इस प्रकार का बुनियादी ढांचा तैयार किया जा सके तो उत्पादन क्षेत्र में और परिवारों की सामाजिक आर्थिक स्तर सुधारने की दिशा में बहुत भारी काम होगा। यदि सभी विषयों यानी खेती, पशुपालन, बागवानी, मुर्गीपालन, सूअरपालन, मछलीपालन, डेयरी, वानिकी, बायोगैस और सौर ऊर्जा संबंधी कामों के लिए बुनियादी ढांचे की व्यवस्था की जा सके तो निस्संदेह इन जानकारियों को गांवों की उन महिलाओं तक भी पहुंचाया जा सकेगा जिनके पास नाम मात्र की जमीन है और इस प्रकार देश के सबसे गरीब साधनहीन लोग भी लाभान्वित हो सकेंगे। □

अनुवाद :—**ब्रजलाल उनियाल,**
के० 38 एफ, साकेत,
नई दिल्ली-110017

कृषि प्रसार की नवीन प्रणाली

प्रशिक्षण एवं भ्रमण

गंगा शरण सैनी

गत योजनाओं में सामुदायिक विकास और राष्ट्रीय विस्तार कार्यक्रमों में ग्राम सेवक की विशेष भूमिका रही है। पहले उसे कृषि, पशु पालन, सामुदायिक विकास आदि के कार्य करने पड़ते थे। उनके साथ-साथ अनेक प्रशासनिक कार्य भी करने होते थे जिसके कारण वह कृषि प्रसार कार्य की ओर पूर्ण रूप से ध्यान नहीं दे पाता था। उसे 4000 कृषकों से विभिन्न कार्यों के लिए सम्पर्क स्थापित करना पड़ता था, जो उसके लिए न केवल कठिन बल्कि असंभव कार्य था। उसकी कृषि प्रौद्योगिकी पुरानी होती थी। इन समस्याओं से छुटकारा दिलाने के लिए कृषि प्रसार की एक नवीन–प्रणाली "प्रशिक्षण एवं भ्रमण" का श्री गणेश किया गया है। कृषि प्रसार की इस नवीन प्रणाली का मुख्य उद्देश्य फसलों की प्रति इकाई उपज में वृद्धि करना है। चूंकि कृषि प्रसार की यह एक नई प्रणाली है अत: इसके बारे में विस्तृत जानकारी नीचे दी गई है, ताकि इस प्रणाली से अधिक से अधिक कृषक लाभान्वित हो सकें :—

प्रशिक्षण एवं भ्रमण प्रणाली का श्रीगणेश जून 1977 में उड़ीसा राज्य में हुआ। उसके उपरान्त यह कार्यक्रम पश्चिमी बंगाल, असम, मध्य प्रदेश, राजस्थान आदि राज्यों में शुरू किया गया। यह प्रणाली दिनों दिन कृषक परिवारों में लोकप्रिय होती जा रही है। इस प्रणाली पर होने वाले अनुमानित

लागत व्यय का ब्यौरा नीचे सारणी में दिया गया है।

राज्य	परियोजना का शुभारंभ	कुल अनुमानित लागत (करोड़ रु० में)
उड़ीसा	जून, 1977	36.00
पश्चिम बंगाल	अगस्त, 1977	25.33
असम	सितम्बर, 1977	14.78
मध्य प्रदेश	सितम्बर, 1977	18.80
राजस्थान	फरवरी, 1978	23.89
बिहार	मई, 1978	14.70
हरियाणा	अगस्त, 1978	11.35
कर्नाटक	अक्तूबर, 1978	20.58
गुजरात	अप्रैल, 1979	12.65
केन्द्रीय विस्तार निदेशालय	सितम्बर, 1979	1.40
केरल	मई, 1980	12.84
	योग	192.32

स्रोत :इन्टेंसिव एग्रीकल्चर–जनवरी, 1981-पृष्ठ संख्या 6

संगठन

प्रशिक्षण एवं भ्रमण प्रणाली में ग्रामीण स्तर पर एक ग्राम सेवक होता है, जिसे 500 से 800 कृषक परिवारों से सम्पर्क स्थापित करना होता है, जो फसल की तीव्रता (क्रॉपिंग इन्टेंसिटी), जोत का आकार व कई अन्य कारकों के ऊपर निर्भर करता है। 500 कृषक परिवारों का लक्ष्य उन क्षेत्रों के लिए उपयुक्त है, जहां पर मुख्य सिंचाई प्रणाली विद्यमान हो। 8 ग्राम सेवकों के ऊपर एक कृषि प्रसार अधिकारी (एग्रीकल्चर एक्सटेंशन ऑफिसर) होता है, जो उनके कृषि कार्यों का निरीक्षण करता है। इस प्रणाली के प्रबन्ध के लिए एक कृषि उप मंडल होता है, जिसके अन्तर्गत 3–5 ब्लाक होते हैं, जो प्रबन्ध की एक इकाई होता है। इसका कार्यभार एक उपमंडल अधिकारी द्वारा संभाला जाता है और इसके साथ विषय-विशेषज्ञों का एक दल भी होता है, जिसमें विशेष रूप से शस्य विज्ञान और पादप रोग विज्ञान के विशेषज्ञ और एक प्रशिक्षण अधिकारी होते हैं। जिला स्तर पर अतिरिक्त विषय-विशेषज्ञ होते हैं। राज्य स्तर पर एक अतिरिक्त कृषि निदेशक (विस्तार) होता है, जिसके साथ भी विषय-विशेषज्ञ होते हैं। इसके ऊपर सर्वोच्च अधिकारी होता है, जिसे कृषि निदेशक कहते हैं। इस प्रकार ग्राम स्तर से राज्य स्तर तक प्रसार कार्यकर्त्ता और प्रसार अधिकारी प्रशिक्षण एवं भ्रमण के प्रोग्रामों को कार्यान्वित करके विभिन्न फसलों की प्रति इकाई उत्पादन में वृद्धि करने के लिए प्रयास करते हैं।

प्रमुख विशेषताएं

इस प्रणाली की प्रमुख विशेषता यह है कि इसमें ग्रामसेवकों और कृषि विस्तार अधिकारियों को प्रशिक्षित किया जाता है। फिर ग्राम सेवक कृषक परिवारों से हर पखवाड़े सम्पर्क करके उनकी समस्याओं का समाधान कराते हैं और वे उन से उन कार्यों को उन्हीं के द्वारा कराते हैं। यह एक गहन समयबद्ध प्रणाली है। कहने का अभिप्राय यह है कि इस प्रणाली में प्रत्येक समस्या का समाधान समय पर कराया जाता है। यह प्रणाली श्रम गहन है। प्रारम्भ में सरल और कम लागत वाली प्रौद्योगिकी जैसे उचित बीजों का चयन, भूमि की तैयारी, पंक्तियों में बुआई, उचित रोपण, खरपतवार नियंत्रण इत्यादि पर विशेष बल दिया जाता है, जिन पर कोई अतिरिक्त व्यय नहीं होता है और न ही इन्हें अपनाने से कृषकों को किसी प्रकार का डर होता है। जैसे ही कृषक को इस प्रणाली में भरोसा हो जाता है, वैसे ही उसकी आय में वृद्धि होती है फिर उसे अधिक मिश्रित और पूंजी उन्मुख प्रौद्योगिकी की सिफारिश की जा सकती है। यह प्रणाली पुनर्संगठित कृषि प्रसार सेवा के द्वारा ही कार्यान्वित की जा सकती है, जिसके द्वारा मानव शक्ति और अन्य उपलब्ध संसाधनों का अधिक प्रभावोत्पादक ढंग से उपयोग किया जा सकता है।

इस नवीन कृषि प्रणाली के मुख्य अवयवों का उल्लेख नीचे किया गया है:

पूर्ण रूपेण कृषि विस्तार

प्रशिक्षण एवं भ्रमण प्रणाली में ग्राम स्तर पर ग्राम सेवक केवल एकल उद्देश्यीय कार्यकर्ता होता है। अर्थात् वह अपना सब समय केवल कृषि प्रसार कार्यों में ही लगाता है। उसे विनियम और प्रशासनिक कार्य नहीं सौंपे जाते हैं, जैसा कि पहले से होता चला आ रहा है।

विस्तार कार्यकर्ताओं का कार्य-क्षेत्र

जिस क्षेत्र में ग्राम सेवक को कार्य करना है, उसमें वह कितने कृषक परिवारों से संपर्क कर सकता है, वह कई बातों पर निर्भर करता है। जैसे जनसंख्या का घनत्व, सड़कें, फसलों की तीव्रता और मानक। अतः उसके लिए कृषि प्रसार कार्यकर्ताओं का प्रबन्ध सीमा क्षेत्र अर्थात् क्षेत्र और कृषकों की संख्या को प्रभावित करता है। इस प्रणाली में ग्राम सेवक तथा अन्य कृषि विस्तार कार्यकर्ताओं का कार्यक्षेत्र निर्धारित होता है, उन्हें केवल अपने क्षेत्र में ही कृषि प्रसार कार्य करने होते हैं।

क्षेत्र विस्तार कार्यकर्ताओं के कार्यों की सफलता के लिए एक विभाग का दायित्व होना अत्यन्त आवश्यक है। जब तक एक विभाग का प्रशासनिक नियंत्रण नहीं होगा, तब तक कृषि विस्तार कार्यों को प्रणालीबद्ध और प्रभावोत्पादक रूप से नहीं चलाया जा सकता है। इस प्रणाली में प्रशासनिक एवं प्रौद्योगिकी निर्देश एक ही स्रोत अर्थात् कृषि विभाग द्वारा होते हैं। इस प्रणाली में किसी अन्य विभाग की दखल-अन्दाजी नहीं होती है।

सारे कृषि विस्तार कार्य एक विशिष्ट विस्तार सेवा के अन्तर्गत किए जाते हैं। विशेष फसल या विशेष क्षेत्र संबंधी स्कीमों में लगे कर्मचारियों को स्थायी कर्मचारी (स्टाफ) में बदल दिया जाता है।

यह एक कटु सत्य है कि विस्तार सेवा प्रभावोत्पादक अनुसंधान कार्यक्रम के बिना भलीभांति कार्य नहीं कर सकती है । कृषि विस्तार और अनुसंधान का चोली दामन का साथ है । ऐसा देखने में आया है कि विस्तार सेवा और अनुसंधान संस्थानों में कोई प्रभावोत्पादक संबंध नहीं है, किन्तु इस नवीन प्रणाली में इनके पारस्परिक संबंध पर विशेष बल दिया जाता है, जिसके परिणामस्वरूप प्रति इकाई अधिक उपज मिलती है ।

प्रशिक्षण

विस्तार कार्यकर्ताओं का प्रशिक्षण अपर्याप्त, पुराना और सामान्य प्रकृति का होता है, किन्तु इस प्रणाली की मुख्य आवश्यकता है कि कार्यकर्ताओं को स्थिति के अनुसार प्रशिक्षित करना है, जो पहले से निश्चित समय पर दिया जाता है । इसके द्वारा विस्तार कार्यकर्ता को अधिक उत्तम अवसर मिलता है जिस से उसे व्यवसायिकता, विशिष्टता और विश्वास के विकास का अवसर मिलता है ।

पर्यवेक्षण

इस प्रणाली के अन्तर्गत सभी स्तरों पर प्रशिक्षण एवं भ्रमण के निर्धारित प्रोग्रामों में उत्तम पर्यवेक्षण का अवसर मिलता है। जिसके कारण उसका अधिकांश समय अपने कृषक परिवारों में व्यतीत होता है । इसके अतिरिक्त वह अपने क्षेत्र की फसलों का निरीक्षण भी सुगमतापूर्वक कर लेता है । साथ ही उसके उपचार के लिए भी वह आवश्यक साधन उपलब्ध कराने के लिए कृषि विस्तार अधिकारी से सम्पर्क स्थापित कर सकता है ।

कार्य विधि

इस प्रणाली के अन्तर्गत कृषकों को उनकी समस्याओं और साधनों को ध्यान में रखते हुए उन्हें खेती की नवीन विधियों के बारे में एक निश्चित अवधि के लिए समयानुसार उचित एवं उपयुक्त ज्ञान दिया जाता है । प्रत्येक माह के प्रथम सप्ताह में उप मंडलीय कृषि अधिकारियों व उनके सहयोगी विषय विशेषज्ञों, कृषि विश्वविद्यालय के अनुभवी वैज्ञानिकों द्वारा दो दिन का प्रशिक्षण दिया जाता है । जिसमें उन्हें आगामी महीने में किये जाने वाले कृषि कार्यों के बारे में विस्तृत रूप से जानकारी दी जाती है और कठिन कार्यों को करके दिखाया जाता है । इसके अलावा इन अधिकारियों को फसलोत्पादन का गहन ज्ञान देने के लिए रबी और खरीफ की बुआई से पूर्व भी फसलोत्पादन के बारे में फसलवार प्रशिक्षण दिया जाता है। दो दिन का प्रशिक्षण लेने के उपरान्त ये विशेषज्ञ महीने में दो बार अपने-अपने उपमंडल स्थल पर सभी ए०डी०ओ० व सी० ए०ओ० का एक दिन का प्रशिक्षण देते हैं और उस पखवाड़े के हिसाब से उन्हीं कृषि क्रियाओं को बताते हैं व करके दिखाते हैं जो उस क्षेत्र में उगाई गई फसलों के लिए उपयुक्त होती हैं । इसके अतिरिक्त ये गांव में जाकर खेतों को देखते हैं और सभी कार्यों में ए०डी०ओ० को पूरा सहयोग प्रदान करते हैं।

प्रशिक्षण एवं भ्रमण प्रणाली के अन्तर्गत प्रशिक्षण के द्वारा ज्ञान विश्वविद्यालय के स्तर से विस्तार कार्यकर्ता (ग्राम सेवक) तक आ जाता है, जिसे कृषकों तक पहुंचाना इस प्रणाली का प्रमुख कार्य है । इस कार्य के लिए वह 800 कृषक परिवारों को 8 भागों (यूनिटों) में बांट लेता है। गहन सम्पर्क के लिए प्रत्येक यूनिट से 10 कृषकों का चयन कर लेता है, जिनसे प्रत्येक पखवाड़े में एक बार पूर्व निर्धारित दिन, समय व स्थान पर सम्पर्क करना और पिछले पखवाड़े के कृषि कार्यों का मूल्यांकन करना, आगे आने वाले 15 दिन के कृषि कार्यों के बारे में सभी को अवगत करना, नए कार्यों को करके दिखाना और कृषक के हाथ से करवाना, खेतों में नई तकनीक को प्रदर्शित करना व इस विषय में सभी कृषकों को बताना, कृषकों की समस्याओं को सुनना और उन्हें उच्च अधिकारियों तक पहुंचाना एक कृषि प्रसार अधिकारी का अनिवार्य कार्य है । इस प्रकार एक पखवाड़े में 8 दिन वह अपने यूनिट के कृषकों से सम्पर्क स्थापित करता है । उपमंडल स्तर पर स्वयं प्रशिक्षण लेता है व बाकी समय में (अवकाश के दिनों को छोड़कर) दूसरे कार्य करता है या किसी यूनिट को निश्चित दिन पर छुट्टी आदि के कारण सम्पर्क न कर पाने पर सम्पर्क स्थापित करता है ।

कृषि विभाग के विशेषज्ञों व विस्तार कार्यकर्ताओं का मुख्य कार्य कृषि प्रौद्योगिकी का कृषकों में प्रचार और प्रसार करना ही है जिसके प्रत्येक स्तर पर हर अधिकारी का दायित्व, कार्यविधि तथा समय पहले से निश्चित होता है । भिन्न-भिन्न स्तरों पर प्रशिक्षण, भ्रमण व सम्पर्क एक निश्चित कार्यक्रम के अनुसार वर्ष भर चलता रहता है, जिससे कृषकों की समस्याएं कृषि प्रसार अधिकारी व उप मंडलीय विशेषज्ञों के द्वारा विभिन्न राज्यों के कृषि विश्वविद्यालयों के वैज्ञानिकों तक और उनका समाधान व नया ज्ञान उसी रास्ते से कृषकों तक प्रति माह लगातार पहुंचाता रहता है ।

अनुश्रवण एवं मूल्यांकन

अनुश्रवण एवं मूल्यांकन इस प्रणाली का अभिन्न अंग है । और प्रणाली के प्रबन्ध का एक लाभदायक उपकरण माना गया है । इसके अन्तर्गत निम्न विषयों का अध्ययन अनिवार्य है :—

सम्पर्क कृषक के चयन का अध्ययन ।

ग्राम सेवक, सहायक प्रसार अधिकारी के प्रत्यक्ष ज्ञान-बोध, रुचि और प्रयोजन का अध्ययन ।

प्रशिक्षण सत्रों की उपयुक्तता और प्रभावोत्पादकता का अध्ययन ।

फार्म बजट और विशेष कृषि कार्यों का अध्ययन और परीक्षणों का विश्लेषण ।

अनुसंधान कार्यक्रम और व्यय तथा पुनरावलोकन करना ।

प्रशिक्षण एवं भ्रमण प्रणाली से ऐसी आशा की जाती है कि विभिन्न राज्यों के द्वारा इसे अपनाने से देश के कृषि उत्पादन में आश्चर्यजनक वृद्धि होगी जिससे हमारे ग्रामों के पुनर्निर्माण में सहायता मिलेगी । कृषकों की खुशहाली में बढ़ोतरी होगी । □

बिहार में सहकारिता द्वारा आदिवासी उत्थान

जे० सी० लोहनी

जहां शोषण है वहां सहकारिता का क्षेत्र है। सहकारिता सीमित साधन वाले कमजोर वर्ग, शोषित वर्ग के व्यक्तियों के लिए है। इन वर्गों के लोगों का आर्थिक एवं सामाजिक उत्थान इसके बिना संभव नहीं। आदिवासी सदियों से शोषित, उपेक्षित एवं प्रताड़ित रहे हैं। ठेकेदार, साहूकार एवं मध्यस्थों की दया पर आश्रित एवं शोषित रहे हैं। दिन भर कठिन श्रम के पश्चात भी आदिवासियों को इतना पारिश्रमिक नहीं मिल पाता था कि वे अपने सम्पूर्ण कुटुम्ब का भरण-पोषण भी कर सकें अथवा जीवन की साधारण सुविधाओं सहित जीवन यापन कर सकें।

बिहार राज्य में आदिवासी जनसंख्या 49.33 लाख है, जिसमें से उपयोजना क्षेत्र में 37.86 लाख या 76.75 प्रतिशत है।

आदिवासी बाहुल्य क्षेत्रों में त्वरित विकास की दृष्टि से इन क्षेत्र को आदिवासी उप-योजना विकास क्षेत्र घोषित किया गया और यह प्रयास किया जा रहा है कि इन क्षेत्रों में विकास कार्यों पर व्यय होने वाली कुल राशि का एक निश्चित प्रतिशत आदिवासियों के उत्थान पर अवश्य व्यय किया जाए। आदिवासी उप-योजना राज्य के जिलों के 112 प्रखण्डों में कार्यरत हैं। जनजातियां अपनी आजीविका के लिए मुख्यतः कृषि एवं वन उत्पाद के संग्रह पर निर्भर करती है। जन जातीय क्षेत्र में ऋण, कृषि और लघु उत्पाद के विपणन के लिए उचित संस्थागत व्यवस्था के अभाव में आदिवासी अज्ञानता, भोलापन एवं अशिक्षा के कारण साहूकार एवं बिचौलियों द्वारा शोषित किए जाते हैं। अतः उनके लिए आर्थिक न्याय एवं सामाजिक समानता की आवश्यकता है कि वे भी शेष राष्ट्रीय जन जीवन के साथ चल सकें। इस शोषण को दूर करने और आदि-वासी अर्थ-व्यवस्था की तीव्र वृद्धि सुनिश्चित करने के लिए तथा उनके आर्थिक-सामाजिक स्तर को ऊंचा उठाने के लिए, केन्द्र एवं राज्य सरकार द्वारा जन-जातियों की आर्थिक उन्नति के लिए कार्य-क्रमों के क्रियान्वयन हेतु अत्यधिक महत्व दिया जा रहा है। इस नीति में सहकारी समितियों को महत्वपूर्ण भूमिका निभानी है। विशेषकर जनजाति वाले राज्यों में सरकारी ढांचे को प्रभावी बनाने के लिए जन जातीय क्षेत्रों में सरकारी कृषि ढांचे से संबंधित अध्ययन दल (बावा) कमेटी की संस्तुति पर बिहार सरकार ने केन्द्र सरकार के इस निर्णय को मूर्त रूप दिया है कि आदिवासी लोगों के सामाजिक एवं आर्थिक उत्थान हेतु "लैम्पस" अर्थात् बड़े आकार की बहूद्देश्यीय समितियां प्रखण्ड स्तर पर संगठित की जाएं।

प्रारम्भ में लैम्पस का कार्य-क्षेत्र एक प्रखंड था, परन्तु इसका कार्य-क्षेत्र बहुत व्यापक हो गया था, और नियंत्रण व प्रबन्ध से बाहर प्रतीत हुआ। अत: इस पर पुनर्विचार हुआ एवं निर्णय लिया गया कि लैम्पस का आकार छोटा हो। इसका प्रयोजन आदिवासियों को एक ही स्थान पर सेवाएं प्रदान करना है ताकि उन्हें अपनी आवश्यकताओं के लिए बहुत सी संस्थाओं में न जाना पड़े।

आदिवासियों को अल्पकालीन कृषि ऋण, उपभोक्ता वस्तुओं, की आपूर्ति एवं कृषि तथा अन्य पदार्थों के विपणन की सुविधा एक स्थान में प्रदान करने के लिए बिहार राज्य में 112 प्रखंडों में 474 लैम्पस का गठन किया जा चुका है। लैम्पस के कार्य क्षेत्र में पड़ने वाली सभी समितियों का विलियन किया गया है। साथ ही लैम्पस के कार्य क्षेत्र में कोई नया व्यापार मण्डल (सहकारी विपणन समिति) गठित नहीं किया जाएगा। कार्य-क्षेत्र में यदि कोई व्यापार मण्डल सहयोग समिति है, तो उसे भी लैम्पस में विलीन कर दिया गया है, ताकि लैम्पस ही विपणन का कार्य करेगी।

इन समितियों को राज्य सरकार ने हिस्सा पूंजी एवं प्रबंधकीय अनुदान उपलब्ध कराया है। प्रत्येक लैम्पस को 50 हजार रुपये के हिसाब से राजकीय साझेदारी की व्यवस्था की गई है। 474 लैम्पस का वार्षिक व्यवस्था व्यय 88.00 लाख रु० होगा और उन्हें सक्षम इकाई बनाने हेतु 5 वर्षों के लिए प्रबन्धकीय अनुदान की राशि का राज्य योजना में प्रावधान किया गया है।

केन्द्रीय सरकारी बैंकों द्वारा लैम्पस के माध्यम से अल्पकालीन तथा मध्यकालीन ऋण वितरित किया जा रहा है। दीर्घकालीन ऋण भूमि विकास बैंक द्वारा अभी अपनी शाखाओं के माध्यम से दिया जा रहा है। आदिवासी उप-योजना क्षेत्र में 10 नई शाखाएं खोली जानी हैं। उपभोक्ता वस्तुओं की आपूर्ति लैम्पस के माध्यम से कराई जा रही है। आदिवासियों द्वारा उत्पादित वस्तुओं को रखने के लिए प्रत्येक लैम्पस में एक गोदाम की व्यवस्था की जा रही है। 301 लैम्पस का गोदाम निर्माण कार्य शुरू किया है।

भारत सरकार द्वारा जिला स्तर पर लैम्पस का संघ बनाने का सुझाव दिया है। अत: 4 जिला स्तरीय संघ के गठन कार्य प्रस्तावित है। नीति के अनुसार लैम्पस को अपनी विपणन, आपूर्ति एवं वितरण गतिविधियों के लिए राज्य स्तरीय जन जाति विकास सहकारी निगमों-संघों या राज्य विपणन एवं आपूर्ति संघों के साथ सम्बद्ध किया जाएगा। ताकि वे कृषि एवं लघु वन उत्पादों को अधि-प्राप्ति, संग्रह और विपणन, कृषि उत्पादन से संबंधित वस्तुओं की आपूर्ति एवं आदिवासियों के उपयोग की आवश्यक वस्तुओं के वितरण कार्य को शुरू करने के लिए, शीर्ष संस्थाओं के रूप में कार्य कर सकें। बिहार में लाख की अधि-प्राप्ति, विधायन एवं विपणन के लिए, जो राज्य का महत्व पूर्ण लघु वन उत्पाद है, पृथक से राज्य स्तरीय सहकारी लाख विपणन संघ (विस्को लैम्पस) रांची में स्थापित है।

वर्ष 1969 में बिहार राज्य जन जातीय विकास सहकारी निगम की स्थापना हुई। यह निगम संबद्ध समितियों के माध्यम से महुआ, पलास, अरण्डी, टस्सर, कोकुन, झाड़ू की घास, गोंद, तेन्दू पत्तियां, भिजरा, वतून आदि के संग्रह एवं विपणन में कार्यरत हैं।

बिहार राज्य जोकि लाख पैदा करने वाले प्रदेशों में प्रमुख है, भारत के कुल उत्पादन का लगभग 50 से 55 प्रतिशत तक उत्पादन करता है। विशेषकर दक्षिणी छोटानागपुर प्रमण्डल जिसमें सबसे अधिक लाख की खेती होती है, का बहुत बड़ा योगदान है। इस क्षेत्र के लगभग 20 लाख आदिवासी तथा पिछड़ी जाति के लोग लाख उत्पादन में लगे हैं। लाख की प्राप्ति, विधायन एवं विपणन कार्य में बिहार राज्य सहकारी लाख-क्रय-विक्रय संघ (विस्को लैम्पस) कार्यरत है, विस्कोलैम्पस की खरीद करीब सभी मुख्य लाख क्षेत्रों में गठित लैम्पस के माध्यम से की जा रही है।

सुझाव

लैम्पस में लगे कार्यकर्ता, प्रसार कार्यकर्ता का चयन बहुत सूझ-बूझ के साथ होना चाहिए। उसकी भूमिका आदिवासी क्षेत्र में मित्र, पथ प्रदर्शक एवं उपदेशक की होनी चाहिए। आदिवासियों के क्षेत्र में कार्य की सफलता के लिए कार्यकर्ताओं को आदिवासियों के पास जाना होगा, उनके मध्य रहना होगा, उनसे सीखना होगा, उन्हें स्नेह करना होगा, उनकी सेवा करनी होगी, उनके साथ योजना बनानी होगी उनके पास जो है उसे बनाना होगा। उनका सही मायने में विश्वास जीतना होगा।

लैम्पस की उप-विधियों का उद्देश्य बड़ा व्यापक है। स्पष्टत: यह समितियां बहु-धन्धी प्रकृति की हैं। परन्तु अभी लैम्पस साख, कृषि उत्पादन की अपेक्षित सामग्री एवं अल्प मात्रा में उपभोक्ता सामग्री की आपूर्ति तथा सीमित मात्रा में वन्य पदार्थों का विपणन कर रहे हैं। सरकारी विभागों को जितनी तत्परता एवं निष्ठा बरतनी चाहिए वह अभी संभव नहीं है। इन समितियों की प्रगति धीमी व अवरुद्ध है। गोदाम निर्माण की प्रगति में विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए। लैम्पस में लगे कार्यकर्ताओं को प्रबन्ध की तकनीक विशेषकर आपूर्ति प्रबन्ध, भंडारण प्रबन्ध एवं विपणन समितियों के प्रबन्ध में प्रशिक्षित किया जाना चाहिए।

संस्थाओं के लिए पर्याप्त पूंजी, कार्यकुशल, निपुण, व्यावसायिक वृत्ति के एवं निर्णय शक्ति वाले अधिकारियों की आवश्यकता है। वर्तमान अधिकारियों को व्यावसायिक शिक्षा एवं व्यावहारिक ज्ञान प्राप्त करने की व्यवस्था होनी चाहिए तथा लैम्पस के प्रबन्ध में निर्णय लेने की प्रणाली में उचित परिवर्तन किया जाना चाहिए। □

जगदीश चन्द्र लोहनी,
व्याख्याता,
दीप नारायण सिंह, सहकारी प्रशिक्षण महाविद्यालय,
बेली रोड, बड़ी नहर के पास,
पटना-800014

माजरा गांव की काया ही बदल गई

✳

बलराम दत्त शर्मा

रोहतक जिले के गांव माजरा के निवासियों ने कल्पना भी नहीं की होगी कि जरा सा ध्यान देने पर उनके गांव की अर्थ-व्यवस्था ही बदल जाएगी।

शहर के आयुर्वेदिक कालेज और हरियाणा टूरिस्ट काम्पलेक्स से केवल एक किलोमीटर दूर बसे इस गांव की कुल आबादी 245 है और यहां 35 परिवार रहते हैं। इनमें से 22 कृषि करते हैं। शेष सिर्फ कृषि मजदूर हैं। 22 कृषि परिवारों में से भी सिर्फ एक परिवार ही ऐसा है जिसके पास 5 हेक्टेयर से अधिक जमीन है। ढाई से पांच हेक्टेयर वाले 14 परिवार हैं और एक से ढाई हेक्टेयर वाले 5 परिवार। गांव में दो परिवार ऐसे भी हैं जिनके पास सिर्फ एक हेक्टेयर जमीन भी पूरी नहीं है।

गांव की कुल जमीन 84 हेक्टेयर है जिसमें से 34 हेक्टेयर में काश्त नहीं होती। सिर्फ 50 हेक्टेयर में दो फसलें निकलती हैं। इस 50 हेक्टेयर की सिंचाई भी दो प्रकार से होती है--20 हेक्टेयर की सिचाई ट्यूबवैल से और 30 हेक्टेयर की नहर से।

पारंपरिक रीति-रिवाजों और कृषि तरीकों एवं साधनों से जकड़े इस गांव को इफको के कार्यकर्ताओं ने अगस्त 1977 में झकझोरा। रोहतक से एक कार्यकर्ता के० एल० तनेजा ने बार-बार इस गांव में जाकर किसानों को खाद के सही उपयोग के साथ-साथ कृषि के उन्नत साधनों के बारे में बताया। किसानों से निरंतर विचार-विमर्श और उन्हें दिया गया दिशा-निर्देश रंग लाया और जैसे उनके दिन ही फिर गए।

जून 1970 में गांव में भू-परीक्षण अभियान चलाया गया। नमूने ले जाए गए और उनका विश्लेषण करवाकर किसानों को उचित फसलें बोने की जानकारी दी गई। गांव वालों के लिए यह एक नई बात थी। उन्होंने इसे आजमाया। इफको कार्यकर्ताओं और अधिकारियों ने स्वयं उनके प्लाट बनवाए।

गांव के किसानों को कृषि विश्वविद्यालयों, पशुपालन एवं कृषि विभाग के विशेषज्ञों की ओर से भी जानकारी दिलवाई गई। कृषि के नए साधनों को अपनाने के साथ-साथ उन्होंने समुचित मात्रा में खाद का भी उपयोग किया।

परिणाम सामने आने लगे। शुरू में गेहूं सिर्फ 20 हेक्टेयर में बोई जाती थी। अब 48 हेक्टेयर में बोई जाती है। उत्पादन शुरू में प्रति हेक्टेयर 1700 किलोग्राम होता था अब एक हेक्टेयर में 3000 किलोग्राम गेहूं मिलने लगा है। यदि आज के सरकारी समर्थन मूल्य से आंका जाए तो अब उस स्थान से 2 लाख 8 हजार 8 सौ रुपये का गेहूं पैदा हो रहा है जबकि पारंपरिक ढंग से खेती करते रहने पर आज के समर्थन मूल्य से भी कृषक को सिर्फ 50 हजार रुपये के लगभग का गेहूं ही मिल पाता।

इसी प्रकार धान सिर्फ 2 हेक्टेयर में होता था जो अब 9 हेक्टेयर में होता है। पहले उत्पादन 25 क्विंटल प्रति हेक्टेयर होता था अब 45 क्विंटल प्रति हेक्टेयर होता है। सीधे शब्दों में जहां सिर्फ 50 क्विंटल धान होता था वहीं अब माजरा निवासी 405 क्विंटल धान प्राप्त कर रहे हैं।

अब बाजरा को लें। बाजरा सिर्फ दो हेक्टेयर में होता था अब 20 हेक्टेयर में होने लगा है। पहले उत्पादन 8 क्विंटल प्रति हेक्टेयर था अब 18.5 क्विंटल है। किसान को प्राप्त होने वाली पैदावार के बारे में सहज ही विश्वास नहीं हो पाता कि जहां सिर्फ 16 क्विंटल बाजरा यहां के निवासियों को मिलता था वहां अब 370 क्विंटल मिलने लगा है।

इसके अतिरिक्त 6 हेक्टेयर में गन्ना भी होने लगा है। अगस्त 1977 में जब इस गांव को इफको वर्करों ने अपना लक्ष्य बनाया तब यहां गन्ना होता ही नहीं था। आस-पास के गांवों की औसत पैदावार 20 क्विंटल प्रति हेक्टेयर थी। जबकि इस समय किसान को प्रति हेक्टेयर 65 क्विंटल गन्ना मिल रहा है।

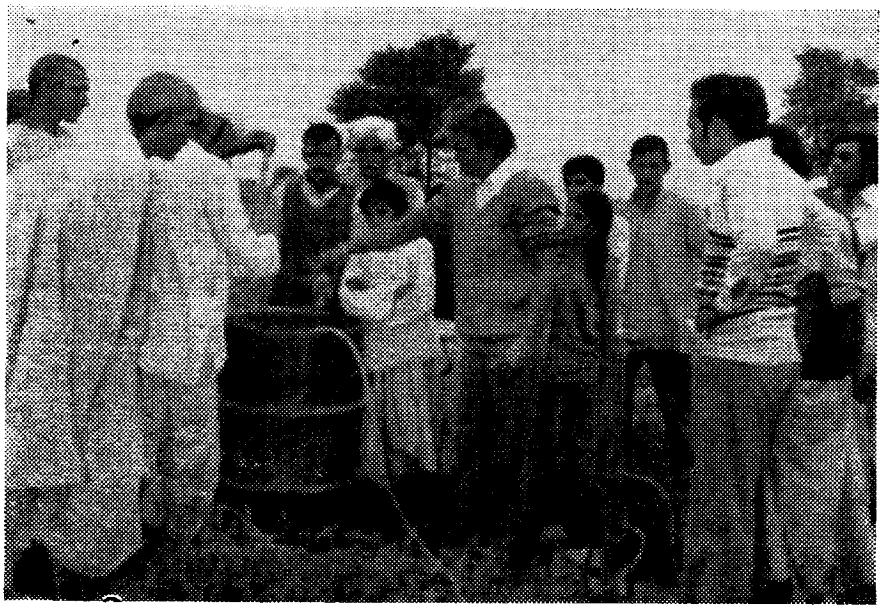

कीटनाशकों का छिड़काव

धान की नर्सरी गांव में ही है। कुछ युवा कृषक हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय से प्रशिक्षण भी प्राप्त कर आए हैं। गांव में एक सहकारी समिति भी है। जिसके 20 सदस्य हैं। 5000 रुपये के फसल कर्जे से शुरू इस समिति ने अब 25 हजार रुपये कर्ज दे रखा है।

माजरा का किसान अब अपना महत्व समझने लग गया है। हरित क्रांति के बाद वह अब श्वेत क्रांति की ओर बढ़ रहा है। गांव में पांच सुव्यवस्थित डेयरियां हैं। पंजाब नेशनल बैंक, लघु कृषक विकास एजेंसी और डेयरी विकास कार्यक्रम की ओर से पशुपालकों को भैंसों के लिए ऋण दिए गए हैं। अब तक 108 भैंसें खरीदी जा चुकी हैं।

माजरा गांव के निवासी गर्व कर सकते हैं कि उन्होंने गरीबी को पीछे धकेल दिया है। □

तेल की हर बूंद कीमती है, इसे बचाइये !

भारतीय बैंकिंग का ग्रामोन्मुखी विकास

※

अमिताभ तिवारी

भारत में व्यापारिक बैंकिंग का प्रारम्भ मुख्य रूप से देश के महानगरों में बड़े व्यापारियों और उद्योगपतियों की वित्त सम्बन्धी आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए किया गया था। बैंकों ने अपनी इस भूमिका का पूर्ण निर्वाह किया और अपने ऋणों की वापसी का पूरा ध्यान रखते हुए अपनी साख नीति का आधार योजनाओं की प्राथमिकताओं को न बनाकर ऋणकर्ता की परिसम्पत्ति को बनाया। इतना ही नहीं प्रायः सभी व्यापारिक बैंकों की स्थापना में बड़े उद्योगपति तथा औद्योगिक घराने प्रत्यक्षतः सम्बन्धित थे। इस सम्बन्ध के कारण बैंक साख किसी न किसी रूप में बैंकों के निदेशकों और उनसे सम्बद्ध उद्योगों की आवश्यकता को पूर्ण करने के लिये प्रयुक्त की जाती थी। इसके कारण अर्थव्यवस्था के महत्त्वपूर्ण अंगों यथा, कृषि, लघु व कुटीर उद्योग आदि पूर्णतः उपेक्षित रहते थे। बैंकिंग सुविधाओं के इस एकांगी विकास और उसके कारण उत्पन्न विसंगतियों का आभास विशेष रूप से उस समय हुआ जब देश में विकास योजनाओं की प्राथमिकताओं के लिए संसाधनों की कमी उत्पन्न हो गई। इसके साथ ही देश में समाजवादी समाज की स्थापना के प्रयासों तथा कृषि में नवीन प्रौद्योगिकी के प्रयोग के फलस्वरूप ग्रामीण क्षेत्रों में वित्त की मांग में तीव्र वृद्धि हो गई। यह भी अनुभव किया जाने लगा कि "बड़ी संस्थाओं—और इनमें बैंक निश्चित रूप से आते हैं—को सम्पूर्ण समाज की सामान्य आवश्यकताओं की ओर अवश्य ध्यान देना चाहिए। इसलिए बैंक सदैव समाज के एक छोटे से भाग की आवश्यकताएं ही पूरी नहीं करते रह सकते और यह आशा नहीं कर सकते कि इस प्रकार की प्रबन्ध व्यवस्था सदैव बनी रहेगी।" अतः यह नितान्त आवश्यक हो गया कि बैंकिंग की प्रकृति और विकास की दिशा में आवश्यक परिवर्तन किया जाए जिससे वह ग्रामोन्मुखी हो सके और नियोजन के लक्ष्यों की प्राप्ति में सहायक हो सके। इस दिशा में पहला प्रयास 1967 में बैंकों पर सामाजिक नियंत्रण की व्यवस्था के रूप में किया गया। इस व्यवस्था का मुख्य लक्ष्य "बैंकिंग राष्ट्रीयकरण के बिना ऋण सुविधाओं का समाजीकरण" करना था। इस प्रकार, यह व्यवस्था की गई थी कि (i) बैंक ऋण का छोटे से वर्ग के हाथों में केन्द्रीयकरण न हो सके, (ii) ऋण का प्रयोग प्राथमिकता प्राप्त क्षेत्रों में होना प्रारम्भ हो जाए तथा, (iii) बैंकिंग सुविधाओं का प्रसार सारे देश में समान रूप से हो सके। परन्तु बैंकों पर सामाजिक नियंत्रण की यह व्यवस्था अपने लक्ष्यों को प्राप्त करने में असफल रही। कानूनों में प्रयुक्त शब्दों का पालन हुआ परन्तु उनकी मूल भावना का हनन करने का प्रयास किया गया। परिणामतः ऋण के दुरुपयोग पर प्रभावपूर्ण नियंत्रण तथा उसका प्राथमिकता प्राप्त क्षेत्रों में प्रयोग सुचारु रूप से न हो सका। इस दिशा में पहला ठोस कदम जुलाई 1969 में उठाया गया जब 14 बड़े व्यापारिक बैंकों का सरकार ने राष्ट्रीयकरण कर दिया। इस राष्ट्रीयकरण का मुख्य उद्देश्य "एक ऐसी व्यवस्थित, संगठित तथा राज्य संचालित बैंकिंग व्यवस्था की स्थापना करना था जिसकी शाखाएं देश के कोने-कोने में फैली हों और जो राष्ट्र की विकास योजनाओं की प्राथमिकताओं के अनुरूप साख की व्यवस्था ग्रामीण क्षेत्रों में भी कर सके जहां बैंकिंग सुविधाएं अभी तक उपलब्ध नहीं हो सकी हैं।" इस दिशा में दूसरा महत्त्वपूर्ण प्रयास अप्रैल 1980 में किया गया जब 6 अन्य बड़े व्यापारिक बैंकों का राष्ट्रीयकरण किया गया। बैंक राष्ट्रीयकरण के इस दूसरे चरण का मुख्य उद्देश्य "राज्य की नीतियों के अनुरूप अर्थव्यवस्था के समन्वित विकास तथा जन-कल्याण में वृद्धि हेतु बैंकिंग सुविधाओं का प्रसार" करना था। बैंकिंग व्यवस्था के राष्ट्रीयकरण के इन प्रयासों के कारण अब देश में कुल 28 सार्वजनिक क्षेत्र के बैंक हैं और व्यापारिक बैंकों की कुल जमा का 90.7 प्रतिशत भाग तथा कुल बैंक ऋण का 90.6 प्रतिशत भाग सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों में है। इस आधार पर निष्कर्ष रूप में यह कहा जा सकता है कि भारत में लगभग सम्पूर्ण व्यापारिक बैंकिंग सार्वजनिक क्षेत्र में है।

सार्वजनिक क्षेत्र बैंकिंग के इस तीव्र प्रसार के अनेक क्रान्तिकारी परिवर्तन सामने आए हैं। सर्वप्रमुख परिवर्तन तो यह रहा है कि व्यापारिक बैंकों की साख नीति परिसम्पत्ति पर आधारित न होकर आवश्यकता और योजनाओं की प्राथमिकता पर आधारित हो गई है। इस परिवर्तन के कारण देश में बैंकिंग सुवि-

धाओं में तीव्र गति से प्रसार हुआ है; विशेष रूप से ग्रामीण क्षेत्रों में और बैंकिंग सुविधा विहीन क्षेत्रों में तो बैंकिंग सुविधाओं का अभूतपूर्व प्रसार हुआ है। ग्रामीण क्षेत्र में बैंकिंग सेवा के इस विस्तार के साथ-साथ एक उल्लेखनीय परिवर्तन यह हुआ है कि व्यापारिक बैंक ग्राम विकास के कार्य में अपनी भूमिका के महत्त्व को समझ गए हैं तथा इस कार्य में विशेष रूप से प्रत्यनशील हैं। इसके प्रमाण के रूप में उन विभिन्न योजनाओं और कार्यक्रमों को देखा जा सकता है जिनको व्यापारिक बैंकों द्वारा ग्रामीण विकास के लिए प्रारम्भ किया गया है। संक्षेप में, निम्नलिखित तथ्यों के आधार पर यह स्पष्ट होता है कि भारत में बैंकिंग की प्रकृति ग्रामोन्मुखी हो रही है :

ग्रामीण क्षेत्र में शाखा विस्तार

राष्ट्रीयकरण के बाद से भारतीय बैंकिंग की सर्वाधिक उल्लेखनीय विशेषता ग्रामीण क्षेत्र में बैंकों की शाखाओं में होने वाला अभूतपूर्व प्रसार रहा है। समग्र रूप में, जून 1969 से जून 1981 की अवधि में बैंक शाखाओं की संख्या में 4 गुने से अधिक की वृद्धि हुई है जिसके कारण बक शाखाओं की संख्या 8,262 से बढ़ कर 35,705 हो गई। महत्वपूर्ण तथ्य यह है कि इन शाखाओं में से अधिकांश की स्थापना बैंकिंग सुविधा विहीन ग्रामीण क्षेत्र में हुई है। जून 1969 से मार्च 1980 की अवधि में स्थापित कुल 23,627 बैंक शाखाओं में से 17,538 शाखाओं की स्थापना ग्रामीण और अर्ध शहरी क्षेत्रों में हुई थी। इसका अभिप्राय, दूसरे शब्दों में, यह है कि जून 1969 के बाद स्थापित प्रत्येक 4 बैंक शाखाओं में से 3 शाखाओं की स्थापना ग्रामीण और अर्द्धशहरी क्षेत्रों में हुई है। ग्रामीण क्षेत्र में हुए इस शाखा विस्तार के कारण मार्च 1980 में कुल बैंक शाखाओं में ग्रामीण और अर्द्ध-शहरी क्षेत्रों में स्थापित शाखाओं का अंश 71.2 प्रतिशत हो गया था। इसका एक अन्य उल्लेखनीय पक्ष यह है कि देश के कुल 669 ब्लाक मुख्यालयों—जहां बैंकिंग सुविधाएं उपलब्ध नहीं थीं—में से 554 ब्लाक मुख्यालयों में कम से कम एक बैंक शाखा जून, 1981 तक स्थापित हो गई थी। शेष बचे 115 ब्लाक मुख्यालयों में से 99 में शाखा की स्थापना की अनुमति व्यापारिक बैंकों को जून 1981 तक मिल चुकी थी। इस आधार पर निष्कर्ष रूप में यह कहा जा सकता है कि अब देश के प्रत्येक ब्लाक मुख्यालय में बैंक शाखाओं की स्थापना हो चुकी है। गांवों की संख्या के आधार पर बैंकिंग सुविधाओं के प्रसार पर विचार करने से यह ज्ञात होता है कि देश के कुल 5,75,936 गांवों में से 60 प्रतिशत से अधिक गांवों में बैंक शाखाओं की स्थापना हो चुकी है। इतना ही नहीं, शेष ग्रामीण क्षेत्र में शाखाओं की स्थापना के प्रश्न पर व्यापारिक बैंक सजग हैं और रिजर्व बैंक के निर्देशन में इस दिशा में निरन्तर प्रयत्न कर रहे हैं।

कृषि विकास के लिए ऋण

राष्ट्रीयकरण के उपरान्त व्यापारिक बैंकों ने देश के कृषि क्षेत्र के समुचित विकास हेतु कृषकों को ऋण प्रदान करने की व्यवस्था प्रारम्भ की। कृषि विकास हेतु दिये जाने वाले ऋण की मात्रा में निरन्तर वृद्धि हो रही है। जून 1969 में बैंकों द्वारा कृषि विकास के लिए मात्र 402 करोड़ रु० का ऋण दिया गया था। यह मात्रा जून 1980 में बढ़कर रु० 2,911 करोड़ तथा मार्च 1981 में रु० 3,573 करोड़ हो गई। इस प्रकार 1980-81 की अवधि में बैंकों द्वारा दिए जाने वाले कृषि ऋण की राशि में 17 प्रतिशत की वृद्धि हुई। कृषि ऋण में होने वाले मात्रात्मक प्रसार के साथ-साथ इसमें गुणात्मक सुधार भी हुए हैं। इस दिशा में विशेष रूप से बैंकों द्वारा ऋण प्रदान करने की प्रक्रिया को सुगम बनाना, ब्याज की दर में कमी करना, भुगतान की अवधि में वृद्धि करना, जमानत सम्बन्धी शर्तों को आसान बनाना, ग्रामीण क्षेत्र में स्थापित शाखाओं में कृषि ज्ञान से युक्त कर्मचारियों की नियुक्ति करना, प्रसार कार्यकर्त्ताओं की नियुक्ति करना आदि प्रमुख हैं। इसके अतिरिक्त व्यापारिक बैंकों ने विशेष रूप से छोटे तथा सीमान्त कृषकों को नीची ब्याज दर पर ऋण प्रदान करने का प्रयास किया है। उपलब्ध आंकड़े बताते हैं कि सितम्बर 1977 तक बैंकों से कृषि कार्य में सुधार हेतु ऋण प्राप्त करने वाले 5 एकड़ से छोटी जोत के स्वामी कृषकों की संख्या 2.2 मिलियन तक पहुंच गई थी। इन कृषकों को कुल 322.92 करोड़ रु० का ऋण दिया जा चुका था। इसके साथ-साथ बैंकों ने अनेक उन क्रियाओं के विकास हेतु ऋण प्रदान करना प्रारम्भ कर दिया है जिनसे कृषि विकास में सहायता मिलती है तथा कृषि क्षेत्र की उत्पादकता में वृद्धि होती है। इन क्रियाओं में अल्प सिंचाई योजना, कृषि यंत्रीकरण योजना, सहकारी समितियों की विकास हेतु योजना आदि प्रमुख हैं। इन विभिन्न योजनाओं के अन्तर्गत बैंकों ने सितम्बर 1977 तक कुल 57 लाख कृषकों को पम्प सेट लगाने, नये कुएं खोदने, विद्यमान कुओं को गहरा करने, अल्प सिंचाई की अन्य योजनाओं को प्रारम्भ करने, कृषि यंत्रों को क्रय करने आदि के लिए कुल 398.27 करोड़ रु० का ऋण प्रदान कर दिया था। इस प्रकार यह स्पष्ट होता है कि राष्ट्रीयकरण के बाद से व्यापारिक बैंक कृषि विकास के कार्य में उत्साहपूर्वक जुटे हैं। यह निश्चय ही हर्ष का विषय है।

कृषि विकास हेतु समुचित मात्रा में ऋण प्रदान करने तथा उसका निर्देशन करने के लिए भारतीय स्टेट बैंक ने एक ठोस कदम उठाया है। इस बैंक ने कृषि विकास हेतु ऋण की व्यवस्था करने के लिए विशेष प्रकार की शाखाएं स्थापित की हैं जिनको **कृषि विकास शाखाएं** कहते हैं। इन विशिष्ट शाखाओं की स्थापना दो ब्लाकों के कृषकों की आवश्यकता पूर्ण करने अथवा इस शाखा के चारों ओर 40 कि०मी० की दूरी तक स्थित लगभग 100 गांवों के समूह की कृषि विकास सम्बन्धी वित्त की जरूरतों को पूरा करने के लिए की जाती है। इस प्रकार एक कृषि विकास शाखा लगभग

1 लाख ग्रामीणों की सहायता करती है। इन कृषि विकास शाखाओं में कृषि ज्ञान युक्त कर्मचारियों की नियुक्ति की जाती है। इन शाखाओं द्वारा सम्बद्ध ग्रामीण क्षेत्र के कृषि विकास की एक विस्तृत योजना तैयार कर ली जाती है तथा उसी योजना के अनुरूप कृषकों को आवश्यक वित्तीय सहायता ऋण के रूप में दी जाती है। साथ ही साथ कृषकों को इन शाखाओं से तकनीक के विकास हेतु सहायता, निर्देश तथा सुझाव भी प्राप्त होते हैं। पशुधन का विकास करने, नए संकर बीजों का प्रयोग करने, रासायनिक उर्वरकों का प्रयोग करने जैसी क्रियाओं को प्रोत्साहित करने के लिए सम्बद्ध विधा के जानकार कर्मचारी कृषकों को सभी प्रकार की सहायता पहुंचाते हैं। इस समय देश में 411 कृषि विकास शाखाएं सफलतापूर्वक अपने कार्य का सम्पादन कर रही हैं। यह निर्विवाद रूप से कहा जा सकता है कि कृषि विकास शाखाओं की स्थापना समुचित कृषि विकास हेतु बैंक ऋण की व्यवस्था करने की दिशा में एक अनोखा प्रयास है जो एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण आवश्यकता की पूर्ति में संलग्न है।

समग्र ग्रामीण विकास

राष्ट्रीयकरण के उपरान्त भारतीय व्यापारिक बैंकिंग के ग्रामोन्मुखी विकास का एक अन्य सुखद परिणाम समग्र ग्रामीण विकास में व्यापारिक बैंकों के सक्रिय सहयोग के रूप में सामने आया है। इसके कारण सभी बैंकों ने समग्र ग्रामीण विकास की अनेक योजनाएं प्रारम्भ की है। इन योजनाओं की व्यूह रचना (स्ट्रेटजी) क्षेत्रीय दृष्टिकोण पर आधारित है। इस व्यूह रचना के अन्तर्गत व्यापारिक बैंक एक निश्चित ग्रामीण क्षेत्र के समग्र विकास का उत्तरदायित्व स्वीकार करते हैं और एक व्यावहारिक योजना बना कर सम्बद्ध क्षेत्र के विकास का प्रयास करते हैं। इस प्रकार की व्यूहरचना की विशेषता यह है कि एक ओर तो प्रत्येक ग्रामीण क्षेत्र के समग्र विकास में बैंक सक्रिय भूमिका निभाते हैं और दूसरी ओर, एक निश्चित ग्रामीण क्षेत्र के विकास का दायित्व मुख्य रूप से किसी एक बैंक पर रहने से वित्तीय संसाधनों के दुहराव की संभावनायें समाप्त हो जाती हैं। उपलब्ध आंकड़ों के अनुसार दिसम्बर 1978 तक देश के लगभग 6 लाख गांवों में से 70,270 गांवों के समग्र विकास का बीड़ा व्यापारिक बैंकों द्वारा उठा लिया गया था और इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए कुल 450 करोड़ रु० के ऋण प्रदान किए जा चुके थे।

समग्र ग्रामीण विकास के इस पुनीत कार्य में योगदान प्रदान करने हेतु व्यापारिक बैंकों ने भारतीय रिजर्व बैंक के निर्देशन में अनेक व्यवहारिक और सुविचारित योजनाओं को प्रारम्भ किया है। इन योजनाओं में लीड बैंक योजना, क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक योजना, तथा विभेदक ब्याज दर योजना जैसी बहुचर्चित और सफल योजनाएं सम्मिलित हैं। इन सभी योजनाओं का लक्ष्य 'क्षेत्रीय दृष्टिकोण' की व्यूहरचना के आधार पर भारत के गांवों के समग्र विकास हेतु बैंक साख का प्रयोग करना है। यह सर्वविदित है कि इन योजनाओं का क्रियान्वयन व्यापारिक बैंक पूर्ण उत्साह तथा निष्ठा के साथ कर रहे हैं। इन योजनाओं से प्राप्त होने वाले परिणामों की परीक्षा करने के लिए अभी कम से कम एक दशक तक प्रतीक्षा करनी होगी क्योंकि ये सभी योजनाएं अभी तक अपनी प्रारम्भिक अवस्था में ही हैं। परन्तु जो संकेत मिल रहे हैं वे उत्साहवर्धक हैं और उनके आधार पर यह अनुमान लगाया जा सकता है कि इन योजनाओं के परिणाम निश्चय ही आशानुकूल होंगे।

समग्र ग्रामीण विकास की दिशा में एक नया प्रयोग भारतीय स्टेट बैंक ने प्रारम्भ किया है। इसे **ग्रामोदय प्रोजेक्ट** कहा जाता है। इस परियोजना के अन्तर्गत स्टेट बैंक एक गांव को विकास हेतु चुन लेता है और उसके बहुमुखी विकास हेतु व्यवहारिक योजना बनाकर उसका क्रियान्वयन किया जाता है। इस कार्य में बैंक सरकार तथा अन्य स्वयं सेवी संस्थाओं का सहयोग स्वीकार करके ग्रामवासियों की आय में वृद्धि करने का प्रयास करता है। आर्थिक विकास के कार्यों में इस परियोजना के अन्तर्गत मुख्य रूप से ग्रामोद्योगों का विकास, जल संसाधनों का समग्र विकास, भूमि विकास कार्यों यथा, भूमि को बराबर बनाना, जल निकासी की व्यवस्था करना आदि, कृषि यंत्रीकरण की व्यवस्था, कृषि के सहायक व्यवसायों यथा, डेयरी, भेड़ पालन, कुक्कुट पालन, मधुमक्खी पालन, शूकर पालन आदि का विकास करना, गोबर गैस प्लान्टों की स्थापना करना, खाद्यान्नों को सुरक्षित रखने के लिए भन्डारों की व्यवस्था करना आदि प्रमुख हैं। इन आर्थिक कार्यक्रमों के साथ-साथ गांव के समग्र विकास के लिए इस परियोजना के अन्तर्गत गांवों में सड़क व पंचायत घर का निर्माण, ग्रामीण विद्युतीकरण योजना, प्राथमिक शिक्षा के प्रसार हेतु विद्यालयों की स्थापना, ग्राम उद्योगों के विकास के लिए प्रशिक्षण व्यवस्था, प्रौढ़ शिक्षा कार्यक्रम का संचालन, उचित मूल्य की दुकानों की स्थापना, स्वच्छ पेय जल की व्यवस्था, परिवार नियोजन व कल्याण कार्यक्रमों का संचालन आदि मुख्य रूप से बैंक द्वारा अन्य संस्थाओं के सहयोग से किया जाता है। इस प्रकार यह स्पष्ट हो जाता है कि ग्रामोदय परियोजना समग्र ग्रामीण विकास में बैंकों के योगदान की एक नवीन और विलक्षण योजना है।

भारतीय बैंकिंग के विकास की प्रवृत्तियों पर इस विहगम् दृष्टिपात् से यह स्पष्ट हो जाता है कि भारतीय बैंकिंग की प्रवृत्ति ग्रामोन्मुखी हो गई है जिसके कारण भारतीय गांवों के आर्थिक, सामाजिक व सांस्कृतिक विकास में व्यापारिक बैंक अपने संसाधनों का प्रयोग ठोस, व्यावहारिक और सुविचारित योजनाओं द्वारा देश की विकास आवश्यकताओं के अनुरूप करने लगे हैं। यह निस्संदेह प्रशंसनीय है और इससे आशाजनक परिणाम प्राप्त होने की संभावना अधिक है। □

प्रवक्ता, अर्थशास्त्र विभाग,
इलाहाबाद डिग्री कालेज,
1बी/2ए राजरूपपुर,
इलाहाबाद-214011

गांव के लिए शिक्षा कैसी होनी चाहिए ?

✳ केवल कृष्ण चोपड़ा

आचार्य, प्रसार प्रशिक्षण केन्द्र, रुद्रपुर (नैनीताल)

सभी समस्याओं का मूल कारण अशिक्षा ही है। इसलिए प्रत्येक विकासशील देश तथा स्वतंत्र देश का यह दायित्व है कि इस प्रकार की शिक्षा नीति तैयार करे, जिसमें देश में तीव्रगति से शिक्षा का प्रसार हो और विभिन्न विकास योजनाओं को जनता के सक्रिय सहयोग से पूर्ण किया जा सके।

भारत वर्ष में 80 प्रतिशत जनसंख्या गांव में रहती है। गांव तथा शहर में शिक्षा पद्धति में कोई अन्तर नहीं है। अधिकतर स्कूल व कालिज ऐसे हैं कि जिन में गांव के युवक शिक्षा प्राप्त कर पुनः गांव नहीं लौटना चाहते, भले ही शहर में उन्हें डेढ़ सौ रुपया मासिक वेतन पर कोई साधारण काम ही क्यों न करना पड़े। इतना ही नहीं अधिकांश शिक्षित युवक बिना किसी नौकरी के उसकी तलाश में समय नष्ट कर रहे हैं। इसका मुख्य कारण हमारी शिक्षा पद्धति में कमियों का होना है, जिसको प्रत्येक वर्ग का बुद्धिजीवी अनुभव कर रहा है। हमारे देश के शिक्षाविद तथा राज नेता समय रहते यदि इस शिक्षा पद्धति में आमूल परिवर्तन नहीं करेंगे तो आने वाले समय में समस्याएं अधिक जटिल होती जाएंगी तथा युवकों में इस समय जो अशान्ति एवं निराशा की भावना व्याप्त है, बढ़ती जाएंगी।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद गांव में शिक्षा का बहुत प्रचार तथा प्रसार हुआ है। शिक्षा के निमित्त विभिन्न स्कूल तथा कालेज एवं महाविद्यालयों की व्यवस्था बड़ी संख्या में की गई है। लेकिन उन में गुणात्मक सुधार नहीं हुआ है। गांव की शिक्षा का स्तर बहुत ही निम्न है क्योंकि इन स्कूलों में साज-सज्जा की कमी है। अध्यापन कार्य के लिए शिक्षकों का अभाव तथा दूसरे विज्ञान की शिक्षा के लिए आवश्यक सामग्री एवं भवन उपलब्ध नहीं हैं।

वर्तमान शिक्षा पद्धति की कमियां

हमारी वर्तमान शिक्षा पद्धति में निम्नांकित कमियां हैं :—

1—यह पद्धति ब्रिटिश शासन काल से प्रचलित है तथा विदेशियों द्वारा अपनाई प्रशासनिक पद्धति देश में शासन व्यवस्था के अनुरूप बनाई गई थी। इससे कार्यालय के लिए अधिकारी तथा कर्मचारी तैयार किये जा सकते हैं।

2—वर्तमान शिक्षा पद्धति विकासोन्मुखी नहीं है। इसलिए शिक्षा का रूप इस प्रकार का होना चाहिए कि आवश्यकता के अनुसार कुशल तकनीकी व्यक्ति तैयार हो सकें, जो विभिन्न विकास योजनाओं में अपना योगदान दे सकें।

3—वर्तमान शिक्षा पद्धति इस प्रकार की है जिसमें आवश्यकता के अनुसार परिवर्तन नहीं किया जा सकता। इसलिए यह विकासशील देश के लिए उपयोगी नहीं है।

4—वर्तमान शिक्षा पद्धति गांव के लिए बिल्कुल उपयोगी नहीं है, क्योंकि इसमें व्यवहारिक ग्रामीण समस्याओं के हल के लिए कुछ भी नहीं है। यह बहुत मंहगी भी है। गांव के निर्बल एवं निर्धन व्यक्ति की पहुंच के बाहर है और इसके विस्तार से गांव में कोई लाभ होने की आशा नहीं है।

अतः यह अनुभव किया जा रहा है कि देश में ऐसी शिक्षा का स्वरूप तैयार किया जाए जिससे शिक्षित युवक देश की विकास योजनाओं में भाग ले सकें तथा स्वयं अपने कृषि सम्बन्धी कार्यों के लिए प्रोत्साहित हों और शहरों की ओर छोटी-छोटी नौकरियों के लिए न भागें। शिक्षा को विकासोन्मुख बनाने के लिए कुछ सुझाव निम्नलिखित हैं :—

1—प्राइमरी तथा माध्यमिक स्तर की शिक्षा पर अधिक बल दिया जाए। गांव तथा शहर में इस प्रकार से शिक्षा दी जाए कि शुरू से ही युवकों में उद्यान, कृषि तथा अन्य लघु उद्योगों के प्रति रुचि पैदा हो और हाथ से कार्य करने की प्रवृत्ति जागृत हो।

2—शिक्षा का रूप ऐसा हो कि जिससे रोजगार के अवसर स्वतः जनित हों और वह उत्पादक हों। कृषि के साथ-साथ उद्योगीकरण भी तीव्र गति से बढ़ रहा है, इसलिए कृषकों को विज्ञान की ऐसी व्यावहारिक शिक्षा हाई स्कूल स्तर पर प्रदान की जाए कि वे कृषि पर आधारित व्यवसायों में अपने अर्जित ज्ञान का उपयोग कर स्वयं जीवकोपार्जन कर सकें।

3—हमारा देश कृषि प्रधान देश है जिसकी 60-70 प्रतिशत जनसंख्या कृषि पर निर्भर है और राष्ट्रीय आय का 50 प्रतिशत से अधिक भाग कृषि से प्राप्त होता है। इसलिए शिक्षा का रूप तदनुसार होना चाहिए। प्राइमरी से लेकर हाई स्कूल स्तर तक गांव में शिक्षा का स्वरूप ऐसा बनाया जाए कि युवक नई कृषि तकनीकों से परिचित हो सकें तथा बच्चे अपने घरेलू व्यवसाय कृषि में सक्रिय रूप से भाग ले सकें।

4—देश में अभी भी 50 प्रतिशत से अधिक व्यक्ति अशिक्षित हैं। गांव में तो यह प्रतिशत और भी अधिक है। भारत वर्ष में 2 अक्तूबर 1978

से राष्ट्रीय प्रौढ़ शिक्षा योजना क्रियान्वित की जा रही है। इसके अन्तर्गत 15-35 वर्ष की आयु के स्त्री-पुरुषों को शिक्षित किया जा रहा है। इस शिक्षा का मुख्य उद्देश्य यह है कि गांव में स्त्री-पुरुषों को इस प्रकार की शिक्षा के माध्यम से उनकी कुशलता बढ़ सके और वे अधिक उत्पादन बढ़ाने में योगदान दे सकें। इससे स्वयं व्यक्ति की योग्यता एवं दक्षता बढ़ेगी तथा साथ ही साथ देश में अधिक उत्पादन होगा। इस शिक्षा पद्धति में बहुत अधिक लचीलापन होना चाहिए। इस प्रकार की शिक्षा का कार्यक्रम विभिन्न प्रकार की राजकीय, राजनैतिक, सामाजिक तथा ऐच्छिक संस्थाएं संचालित कर रही हैं। छठी पंचवर्षीय योजना में दस करोड़ व्यक्तियों को शिक्षित करने का लक्ष्य है।

5—उच्च शिक्षा का प्रसार उसी अवस्था में उपादेय होगा जब कि देश आर्थिक दृष्टि से सम्पन्न हो और उच्च शिक्षा संस्थानों की स्थापना की जाए। इससे देश की उन्नति के लिए विभिन्न क्षेत्रों में दक्ष प्राविधिक व्यक्ति उपलब्ध हो सकेंगे।

वर्ष 1921 में प्रति व्यक्ति 0.444 हे० जमीन खेती के लिए उपलब्ध थी जो घट कर अब केवल 0.276 हे० रह गई है। इससे गांव में रोजगार की समस्या जटिल होती जा रही है। इसलिए गांव में इस प्रकार की शिक्षा तथा प्रशिक्षण का स्वरूप ऐसा होना चाहिए, जिससे अधिक से अधिक लोग रोजगार में लग सकें। इस समय भारत के समस्त 5008 विकास खण्डों में अक्तूबर 1980 से एकीकृत ग्राम विकास योजना शुरू की गई है जिसके अन्तर्गत प्रत्येक विकास खण्ड में प्रतिवर्ष 40 युवक/युवतियों को स्वतः रोजगार योजना सम्बन्धी प्रशिक्षण दिया जाना है और वर्ष में लगभग 2,00,000 युवकों/युवतियों को प्रशिक्षित कर रोजगार में लगाया जाएगा। यह प्रशिक्षण कार्यक्रम राजकीय, अर्द्ध-राजकीय तथा अन्य प्रकार की प्रशिक्षण संस्थाओं पर आयोजित किया जा रहा है। इस प्रशिक्षण कार्यक्रम को सुनियोजित रूप से चलाने के लिए यह आवश्यक है कि विभिन्न उपलब्ध संस्थाओं में प्रशिक्षण सुविधाओं का आकलन किया जाए एवं विभिन्न विभागों में समन्वय स्थापित किया जाए। कुछ संस्थाओं को सुदृढ़ करने की भी आवश्यकता होगी जिससे प्रशिक्षण को व्यावहारिक बनाया जा सके। उपलब्ध प्रशिक्षण संस्थाओं का भविष्य में विस्तार भी करना पड़ेगा, क्योंकि यह मांग की पूर्ति नहीं कर पाएगी। इसलिए भविष्य में निम्नांकित प्रकार से खण्ड स्तर से जिला स्तर पर अनेक प्रकार की प्राविधिक प्रशिक्षण देने के लिए संस्थाओं की स्थापना की आवश्यकता होगी :—

1. समन्वित कृषि प्रशिक्षण केन्द्र

इस समय राज्य सरकार तथा कृषि विश्वविद्यालय द्वारा कृषक प्रशिक्षण केन्द्र तथा कृषि विज्ञान केन्द्र संचालित किए जा रहे हैं जिन पर कृषकों को उन्नत कृषि तकनीकी में अल्प अवधि के पाठ्यक्रमों द्वारा प्रशिक्षित किया जाता है। भारत के सभी जनपदों में इस प्रकार के प्रशिक्षण की व्यवस्था नहीं है। इसलिए यह आवश्यक है कि प्रत्येक जनपद में कम से कम एक कृषक प्रशिक्षण केन्द्र अथवा कृषि विज्ञान केन्द्र की स्थापना की जाए। ये संस्थाएं कृषि, पशुपालन, बागवानी में प्रशिक्षण देने के लिए पूर्ण-रूप से सक्षम होनी चाहिए तथा प्रशिक्षण व्यावहारिक होना चाहिए। इन संस्थानों में कार्यरत स्टाफ को भी कृषि विश्वविद्यालयों तथा कृषि अनुसंधानशालाओं में भेज कर प्रशिक्षित किया जाये।

2. जिला ग्राम शिल्प तथा उद्यमकर्ता विकास केन्द्र

भारत वर्ष में लगभग सभी जनपदों में जिला उद्योग केन्द्रों की स्थापना की गई है, जिससे ग्राम शिल्पियों तथा उद्यमकर्ताओं को अपना रोजगार शुरू करने के लिए, उद्योग इकाई स्थापित करने के लिए जिन वस्तुओं की आवश्यकता है, एक ही स्थान पर उपलब्ध हो सकें। श्रम मंत्रालय द्वारा विभिन्न ट्रेडों में प्रशिक्षण देने के लिए राजकीय प्रौद्योगिक प्रशिक्षण संस्थान तथा पोलीटैकनिक संचालित किए जा रहे हैं, कृषि मंत्रालय के विस्तार निदेशालय द्वारा वर्कशाप विंग ग्रामीण युवकों को कृषि यंत्रों एवं मशीनरी सम्बन्धी प्रशिक्षण देने के लिए आयोजित किया जाता है। इन सभी प्रकार की संस्थाओं में भी समन्वय की आवश्यकता है, जिससे एक जनपद में कम से कम एक संस्था ऐसी उपलब्ध हो जहां पर विभिन्न ट्रेडों जैसे बढ़ईगीरी, लोहारगीरी, टिनस्मिथी, जनरल मैकेनिक, टर्नर, मोटर मैकेनिक, टेलरिंग, निटिंग, ट्रैक्टर एवं पम्प सैट मरम्मत, विद्युत मैकेनिक, मोटर रिवाइंडिंग तथा अन्य स्थानीय आवश्यकतानुसार युवक/युवतियों को प्राविधिक प्रशिक्षण दिया जा सके। ये संस्थायें विभिन्न प्रकार के उपकरणों एवं संसाधनों से सुसज्जित होनी चाहिए तथा इनमें केवल व्यावहारिक प्रशिक्षण ही दिया जाए, जिससे प्रशिक्षणोपरान्त युवक/युवती अपना सही रोजगार कर सकें। यदि ये संस्थाएं दक्ष शिल्पी तथा उद्यमकर्ता तैयार करेंगी तो एकीकृत ग्राम विकास योजना के अन्तर्गत जो प्रति वर्ष 10,00,000 परिवारों को गरीबी की रेखा से व्यवसाय तथा उद्योग द्वारा ऊपर उठाना है, सम्भव हो सकेगा।

3. खण्ड स्तर पर प्रशिक्षण की व्यवस्था

जिला स्तर की प्रशिक्षण संस्थाओं के अतिरिक्त खण्ड स्तर पर भी मिश्रित (कम्पोजिट) प्रशिक्षण केन्द्रों का जाल बिछाने की आवश्यकता है, जिससे गांव तथा विकास खण्डों की मांग के अनुसार प्रशिक्षण सुविधाएं खण्ड स्तर पर ही उपलब्ध हो सकें। इन प्रशिक्षण संस्थाओं पर भी कृषकों/शिल्पियों, उद्यमियों के लिए अल्प अवधि के लिए प्रशिक्षण सत्र ही आयोजित किए जाएं। इनकी स्थापना से ग्रामीण युवक/युवतियों को खण्ड के बाहर नहीं जाना पड़ेगा तथा आवश्यकतानुसार उनका व्यावहारिक प्रशिक्षण सम्भव हो सकेगा। गांव की परिस्थितियों के अनुकूल प्रशिक्षण प्राप्त करने पर स्थानीय संसाधनों के अनुरूप युवक/युवती अपना रोजगार स्थापित करने में सक्षम बन सकेंगे। इन संस्थानों का संचालन सहकारी संस्थाओं तथा अन्य ऐसी संस्थाओं द्वारा किया जा सकता है जिसे शुरू में राज्य सरकार अवस्थापना मद के अन्तर्गत अनुदान की सुविधाएं उपलब्ध करवा सकती है।

(शेष पृष्ठ 25 पर)

प्रचुर दूध योजना से

गरीब दुग्ध उत्पादकों की

आय में वृद्धि

संयुक्त राष्ट्र का एक विशेषज्ञ दल हाल ही में प्रचुर दूध परियोजना का मूल्यांकन करने भारत आया था। 1970 में प्रारम्भ की गई इस योजना का प्रथम चरण 1981 में पूरा हो गया। विश्व की सबसे बड़ी दुग्धशाला विकास परियोजना को विश्व खाद्य कार्यक्रम के अन्तर्गत सहायता मिली है। एक अंग्रेज पत्रकार जॉन टोरोडे इस विशेषज्ञ दल के साथ थे। प्रस्तुत लेख उनके प्रत्यक्ष अनुभवों पर आधारित है।

भारत के शहर काफी लम्बे अरसे से गाय और भैंसों के दूध में मिलावट होने से परेशान थे। छोटे दूध विक्रेता जो दूध सप्लाई करते थे, दूध की शुद्धता पर ध्यान नहीं देते थे।

एक आधुनिक डेयरी उद्योग से ग्रामीण क्षेत्रों में दूध उत्पादन में काफी वृद्धि हुई और शहरों में दूध देने वाले पशुओं का महत्व इससे कम हुआ।

इसमें दूध के एकत्र करने, संसाधित करने और उसका विपणन करने के नए तरीकों की आवश्यकता थी ताकि उन छोटे किसानों और भूमिहीन मजदूरों की आय में वृद्धि का मार्ग प्रशस्त हो सके जो इस परम्परागत व्यवसाय में लगे हुए थे। साथ ही यह आवश्यक था कि शहरी उपभोक्ताओं और गरीब वर्ग को स्थिर तथा उचित कीमत पर दूध उपलब्ध हो।

संयुक्त राष्ट्र संघ के एक दल ने इस प्रकार दूध योजना की सफलता का हार्दिक विश्वास व्यक्त किया। उनका निष्कर्ष था कि अन्य विकासशील देशों में इसके सिद्धांतों और प्रणालियों को समुचित रूप से अपनाना चाहिए।

विशेष रूप से इस दल ने इस स्वयं सहायता योजना के लिए प्राप्त इस अन्तर्राष्ट्रीय सहायता के तीन अनोखे पहलुओं की प्रशंसा की है।

तीन अनोखे पहलू

दूध की बिक्री में खाद्य सहायता के रूप में प्राप्त तत्वों को इस प्रकार प्रयोग किया गया है कि विकास के लिए धन प्राप्त हो और साथ ही स्थानीय कृषि उद्योगों को बढ़ावा मिले।

आनन्द पद्धति पर बनी ग्रामीण सहकारिताओं जिनके अन्तर्गत बड़े जिला सहकारिता संघ, जिसमें सैकड़ों गांव शामिल हैं, काम करते हैं। इन संघों के पास अपनी दुग्धशालाएं हैं, पशु चारा संयंत्र हैं और पशुओं की सेहत, अच्छी नस्ल, कृत्रिम गर्भाधान, विस्तार कार्य, प्रशिक्षण, संतुलित भोजन आदि की सम्मिलित सुविधाएं हर सदस्य को दी जाती हैं। उत्पादक संघ और दुग्ध बाजार के बीच बम्बई, कलकत्ता, दिल्ली और मद्रास चार बड़े शहरों में संस्थागत सम्पर्क रहता है। दो सार्वजनिक प्रतिष्ठान राष्ट्रीय दुग्ध विकास बोर्ड और भारतीय डेयरी निगम जो योजना के निर्माण और वित्तीय सहायता प्रदान करते हैं, उनका एक ही अध्यक्ष है।

10,000 सहकारी समितियां

10,000 ग्राम दुग्ध सहकारी समितियों का गठन किया गया है जिसमें 27 दुग्ध शैडों में 13 लाख से अधिक उत्पादक काम में लगे हुए हैं। रिपोर्ट में कहा गया है कि यह एक बहुत बड़ी उपलब्धि है। जिला संघों का निर्माण करने में पर्याप्त प्रगति हुई है जिससे छोटे दुग्ध उत्पादकों को अपने गांव से दूर दुग्ध के विपणन और बिक्री के संबंध में अपनी बात प्रभावशाली ढंग से कहने का पूरा अवसर मिलेगा।

कुल मिलाकर आनन्द सहकारी ढांचा एक जीता जागता उदाहरण है जिसमें बताया गया है कि किस प्रकार सहकारी तकनीक को वित्तीय और तकनीकी सहायता से उपयोग कर छोटे उत्पादकों और भूमिहीनों की आय में उल्लेखनीय वृद्धि हो सकती है।

"प्रचुर दूध" के आलोचकों का कहना है कि इस योजना से केवल धनी ग्रामीण ही लाभ उठाते हैं परन्तु मिशन का विचार है कि काफी संख्या में गरीब ग्रामीण दुग्ध उत्पादकों की आय में तेजी से वृद्धि होती जा रही है। आंकड़ों द्वारा और विशेष अध्ययन करा कर

यह दावा किया गया है कि दूध की बिक्री से आय में औसत 60 प्रतिशत की वृद्धि हुई है।

सड़क से हटे गांवों के किसानों से विचार विमर्श के बाद यह पता चलता है कि सहकारी सदस्यों में छोटे और सीमान्त किसानों की संख्या 50 और 70 प्रतिशत के बीच है। भूमिहीनों में लगभग 10 प्रतिशत सहकारी सदस्य हैं।

सहकारिता आने से परिवारों की आय दुगनी हो गई है। दूसरी महत्वपूर्ण बात है कि अदायगी नियमित रूप से रोजाना की जाती है। गरीबों को अब बढ़े-चढ़े ब्याज की दर पर उधार लेने से छुटकारा मिला है।

मिशन को पता लगा है कि गांवों के सुधार के लिए ग्राम स्तर पर पर्याप्त अतिरिक्त कोष बन गया है जिसका उपयोग प्रजातांत्रिक ढंग से सदस्यों की इच्छानुसार गांव के विकास के लिए किया जाता है। मुख्यतया स्कूलों, अध्यापकों के लिए मकानों, स्वास्थ्य केन्द्रों, सड़कों, जल आपूर्ति, पुस्तकालयों, अस्पतालों और छात्रवृत्तियों के लिए इस राशि का उपयोग होता है।

इससे दो लाभ हुए हैं। ग्रामों के सुधार के अतिरिक्त इससे उन निपट गरीब लोगों को भी लाभ पहुंचा है जो सहकारी समिति के सदस्य नहीं हैं। इससे सदस्यों को लोकतंत्र का अनुभव हुआ है।

महिलाओं के स्तर में सुधार

दूध देने वाले पशुओं की देखभाल में महिलाओं की मुख्य भूमिका होती है और इसी कारण सहकारिता में औसत 10 प्रतिशत महिला सदस्य हैं। गुजरात के अहमदाबाद जिले में कुछ ऐसी सहकारी समितियां भी हैं जिनका सारा कार्य महिलाओं द्वारा चलाया जाता है। मिशन ने जानकारी दी है कि सहकारी दुग्ध उत्पादन द्वारा बढ़ी हुई आय पर महिलाओं का नियंत्रण रहता है। इससे परिवार में उनका महत्व बढ़ा है।

"आनन्द" शैली की सहकारी समितियों का यह नियम है कि इनमें महिलाओं, पिछड़ी और ऊंची जाति को बराबर माना जाता है। वे प्रत्येक सुबह और शाम को अपने दूध को जमा करने के लिए एक साथ खड़े होते हैं। यद्यपि बाहर वालों को यह निरर्थक लगता होगा परन्तु एक ग्रामीण के लिए यह क्रांतिकारी परिवर्तन है। सहकारी समितियों के वार्षिक चुनाव में सब गुप्त मतदान करते हैं।

मिशन को यह भी जानकारी मिली है कि ग्रामीण परिवार दूध को इकट्ठा करने में अधिक लाभदायक और कुशल विधि अपनाने के परिणामस्वरूप स्वयं कम दूध का उपभोग करते हैं परन्तु वे अपनी बढ़ी हुई आमदनी से अधिक पौष्टिक और सस्ता आहार खरीदते हैं। ऐसे कई उदाहरण हैं जिनसे पता चलता है कि दुधारू पशु पालने वाले व्यक्तियों का पोषण-स्तर दुधारू पशु न रखने वाले व्यक्तियों से 15 से 20 प्रतिशत तक अधिक हो गया है। आमदनी को बेहतर कपड़ों, स्वास्थ्य और शिक्षा के साथ-साथ फसल के उत्पादन से संबंधित सामान पर भी खर्च किया जाता है।

परियोजना प्रयासों के बिना शहरी दुग्ध योजनाओं के दूध का राशन करना पड़ता और निजी विक्रेताओं से दूध बहुत ऊंचे दामों पर मिलता। फलतः थोड़ी आय वाले लोगों के लिए पर्याप्त और नियमित खुराक प्राप्त करने में कई समस्याएं खड़ी हो जातीं।

दूध की बिक्री से लगभग 100 करोड़ रुपये (11 करोड़ डालर) कमाए गए हैं। इस धन से पांच वर्तमान शहरी डेयरियों का विस्तार कर उनकी क्षमता प्रतिदिन 15 लाख लिटर कर दी गई है, चार मदर डेयरियों का निर्माण किया गया है जिनकी दूध की कुल क्षमता प्रतिदिन 14 लाख लिटर है, 17 संतुलित आहार डेयरियां बनाई गई हैं जिनकी दूध क्षमता प्रतिदिन 54 लाख लिटर है और एक द्रुतशीतल संयंत्र का निर्माण किया गया है जिसकी प्रतिदिन क्षमता चार लाख लिटर की है।

आवर्त्ती कोष

विश्व खाद्य कार्यक्रम की खाद्य सहायता से दोबारा बनाए गए उत्पादों की बिक्री से प्राप्त धन के द्वारा बनाया गया आवर्त्ती कोष संचालन की मूल योजना से भी बेहतर है। इस समय खाद्य सहायता के रूप में दिए गए ऋण की राशि 66 करोड़ 26 लाख रु० है जिसकी अदायगी अगले पांच वर्षों में होगी। इस धन को दोबारा "प्रचुर दूध" के दूसरे चरण में खर्च किया जाएगा।

स्थानीय स्तर पर 7730 गांवों को तकनीकी साज-सामान योजना के अन्तर्गत लाया गया है जिसमें 262 चलते-फिरते पशु चिकित्सालय इकाईयां और 3052 कृत्रिम गर्भाधान केन्द्र शामिल हैं। इसके अतिरिक्त पशुओं के चारे के लिए 10 संयंत्र स्थापित किए गए हैं। दो संयंत्रों का विस्तार किया जा रहा है और पांच संयंत्र निर्माणाधीन हैं।

डेयरी उपकरण निर्माण उद्योग का आध-

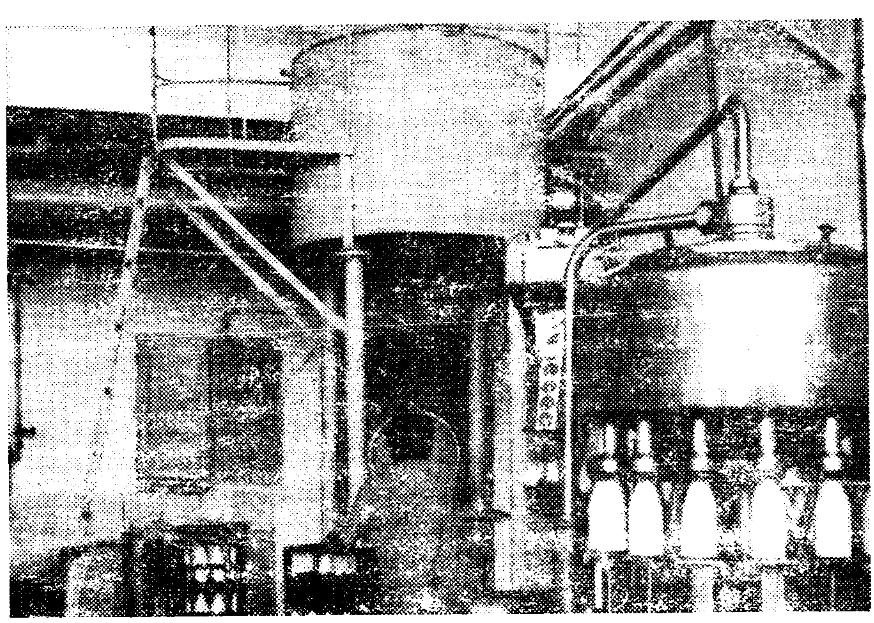

दूध बोतलों में भरा जा रहा है

निकीकरण और विस्तार किया गया है। इसका लाभ यह हुआ है कि इस समय भारत की आवश्यकता के केवल 10 प्रतिशत उपकरण ही बाहर से मंगाए जाते हैं। एक दशक पहले भारत में केवल 40 प्रतिशत उपकरणों का ही निर्माण किया जाता था।

"प्रचुर दूध–दूसरा चरण"

वार्षिक आंकड़ों से पता चलता है कि 1970 के दशक के दौरान दुग्ध उत्पादन में उल्लेखनीय सुधार हुआ है जो प्रचुर दूध का दशक था। 1940-41 और 1960-61 के दशक के बीच दूध का उत्पादन बढ़कर 166.1 लाख टन से बढ़कर केवल 198.4 लाख टन हो गया लेकिन 1970 के दशक के अन्त तक 1980 में दूध का उत्पादन बढ़कर 300 लाख टन हो गया।

इसके अतिरिक्त मिशन का निष्कर्ष है कि ग्रामीण सहकारी समितियों द्वारा अब शहरी उपभोक्ताओं को 1971 की तुलना में ताजा दूध दुगुनी मात्रा में बेचा जाता है। फिर भी बढ़ती हुई जनसंख्या के कारण दूध मांग को पूरा नहीं किया जा सका है। भारत सरकार ने 2 अक्तूबर, 1979 को महात्मा गांधी के जन्म दिवस पर "प्रचुर दूध-दो" का एक सात वर्षीय कार्यक्रम शुरू किया है। इसका उद्देश्य यह है कि सारे भारत की "प्रचुर दूध—एक" का लाभ पहुंचाया जा सके और 102 लाख किसान परिवारों को सहकारिता के अन्तर्गत लाया जा सके। (इस समय 13 लाख इसके सदस्य हैं)। संयुक्त रूप से अपने उत्पाद को बेचने के लिए 25 विपणन संघों का निर्माण किया जाएगा। प्रथम कार्यक्रम के अन्तर्गत चार बड़े शहरों को दूध पहुंचाने के बजाय नई परियोजना के अन्तर्गत देश के 47 मुख्य शहरों और नगरों को दूध की सप्लाई की जायेगी।

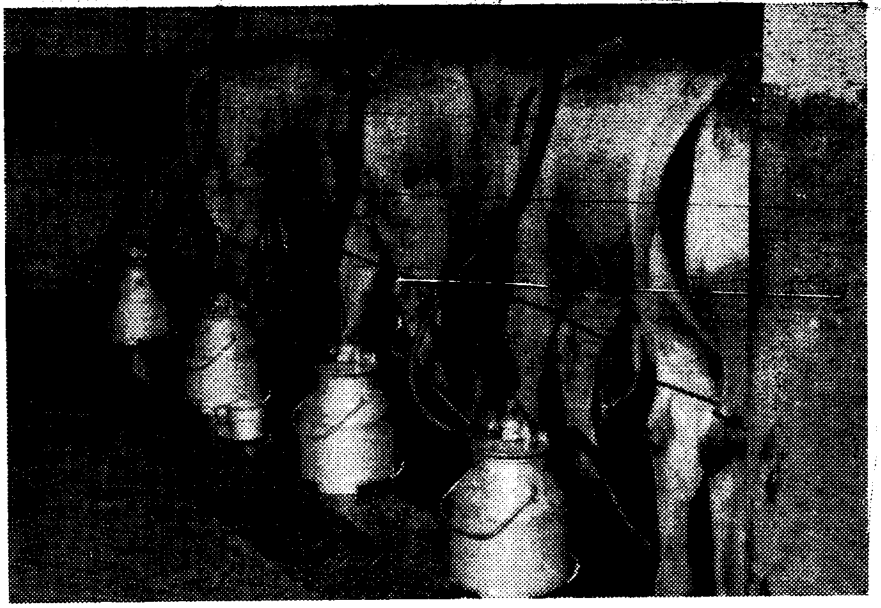

मशीनों से गायों का दूध निकाला जा रहा है

विश्वास किया जाता है कि 1981 के दशक के मध्य तक "प्रचुर दूध—दो" सफलता पूर्वक पूर्णतया क्रियाशील होगा। राष्ट्रीय डेयरी विकास बोर्ड के अनुसार 1980 के दशक के अन्त तक वर्तमान परिणामों को देखते हुए पूर्ति और मांग के बीच संतोषजनक रूप से संतुलन स्थापित किया जा सकेगा। यह इस तथ्य का उदाहरण होगा कि खाद्य सहायता में परावलंबी होना अनिवार्य नहीं है। यद्यपि इसका विवेकपूर्ण उपयोग हो तो आत्म-निर्भरता की प्राप्ति के लिए अनुकूल परिस्थितियां उत्पन्न हो सकती हैं। □

गांव के लिए शिक्षा कैसी होनी चाहिए .... (पृष्ठ 22 का शेषांश)

उक्त सभी प्रकार की प्रशिक्षण देने वाली संस्थाओं के समन्वय के लिए, राज्य, जनपद तथा खण्ड स्तर पर समन्वय समिति गठित हो जो इन संस्थाओं के कार्यकलापों का मूल्यांकन एवं समीक्षा कर सुधार हेतु सुझाव दे। इससे इन केन्द्रों की कार्य प्रणाली एवं कुशलता में निरन्तर वृद्धि होगी तथा जनशक्ति को क्षेत्रीय मांग के अनुसार तैयार किया जा सकेगा। यदि इस प्रकार गांव की शिक्षा को स्वरूप दिया जाएगा तो निकट भविष्य में गांव में बेरोजगारी की जो भीषण समस्या है उस पर नियंत्रण हो सकेगा तथा निर्धारित लक्ष्य के अनुसार एकीकृत ग्राम विकास के लक्ष्यों को भी प्राप्त किया जा सकेगा। □

हमारी सम्पदा हमारे वन

श्रमिक कुण्ठा उत्पादकता वृद्धि में बाधक

राकेश कुमार अग्रवाल

श्रम-सघन उत्पादन तन्त्र में श्रमिक उत्पत्ति का सबसे महत्वपूर्ण साधन है। अल्प विकसित देशों में पूंजी व तकनीकी ज्ञान के अभाव और जन संख्या के दबाव के कारण पूंजी-सघन उत्पादन व्यापक आधार पर अपनाना सम्भव नहीं होता। उत्पादकता में सहायक होने के बाद भी आधुनिक प्रौद्योगिकी का प्रयोग अनेकानेक सीमाओं के कारण एक निश्चित सीमा तक ही किया जा सकता है। इस दशा में उत्पादकता मानवीय शक्ति के श्रम कौशल पर निर्भर करती है ।

श्रम, श्रमिक की शक्ति है जो उसके मन, मस्तिष्क और शरीर से प्रस्फुटित होती है। श्रमिकों की कार्यदक्षता मुख्य रूप से मन से संचालित होती है। इसीलिए उत्पादकता का शरीर के स्थान पर मन से अधिक घनिष्ठ सम्बन्ध होता है । मानसिक रुझान के बिना अच्छे प्रतिफल की आशा नहीं की जा सकती । मन भाव प्रधान होता है । जो अपने आन्तरिक और बाह्य परिवेश में घटने वाली प्रत्येक घटना से प्रभावित होता है । इसी कारण अनेक दशाओं में श्रमिक कुण्ठा से ग्रसित हो जाते हैं। यह कुण्ठा उसकी कार्य-क्षमता को कम करके उत्पादकता पर बुरा प्रभाव डालती है । श्रमिकों में व्यापक रूप से कुण्ठा व्याप्त हो जाने पर औद्योगिक अशांति का जन्म होता है जो उत्पादकता के लिए अत्यन्त हानिकारक है। अतः उत्पादकता वृद्धि के लिए श्रमिकों को कुण्ठा मुक्त रखना आवश्यक है ।

20वीं शताब्दी से पूर्व श्रमिक को निर्जीव वस्तु की भांति समझा जाता था। इस कारण नियोक्ता उनसे मशीन के समान जितना कार्य ले सकता था, लेता था । इस पर भी उसको न्यूनतम मजदूरी और निम्न कार्य दशाएं उपलब्ध कराई जाती थीं। एक सामान्य धारणा व्याप्त थी कि पेट भरने पर श्रमिक कार्य नहीं करते बल्कि धूर्त और मक्कार बन जाते हैं। इस आधार पर श्रमिक वर्ग का सब प्रकार से शोषण किया जाता था। परिणामस्वरूप उत्पादकता का स्तर निम्न बना रहता था क्योंकि श्रमिक भय, दबाव और कुण्ठा के कारण निष्ठा-हीन बन कर उत्पादन में न्यून सहयोग देते थे ।

समय की गति के साथ सब कुछ बदल गया। जहां नियोक्ताओं के दृष्टिकोण में व्यापक परिवर्तन आया है वहीं श्रमिक भी आशा से अधिक जागरूक हो गया है। आज यह समझा जाने लगा है कि श्रमिक वर्ग के प्रति उदासीनता निम्न उत्पादकता का कारण बनती है । जबकि उत्पादकता आर्थिक प्रगति का आधार है । औद्योगिक विकास की प्रक्रिया दिनों-दिन जटिल होती जा रही है। विशेष रूप से विकासशील देशों में जहां श्रम सघन उत्पादन परिस्थिति जन्य विशेषता है । निम्न प्रकृति वाला मनुष्य उत्पादन तन्त्र का आधार होता है। जो सम्बन्धित क्षेत्र में घटने वाली प्रत्येक घटना से किसी न किसी रूप में प्रभावित होता है। यह प्रभाव उसके आचार-विचार को परिवर्तित कर देता है । अनेक बार व्यक्ति छोटी-सी घटना से भी कुण्ठा का शिकार हो जाता है जिसका प्रभाव उसके चिडचिड़े स्वभाव से झलकता है, इसके साथ ही उसकी कार्यकुशलता कम हो जाती है।

व्यावहारिक धरातल पर श्रमिक व्यक्तिगत, पारिवारिक, सामाजिक व कार्य सम्बन्धी अनेकानेक समस्याओं से घिरा रहता है। ये मानवीय समस्याएं मनोवैज्ञानिक आधार पर उसमें नैराश्य उत्पन्न कर देती हैं जिसका उत्पादकता पर बुरा प्रभाव पड़ता है। आज भी विश्व के अधिकांश अल्प विकसित देशों में अधिसंख्य श्रमिक अथक परिश्रम करने के बाद भी आर्थिक रूप से अत्यन्त दयनीय जीवन जीते हैं। भारत में 47.6 प्रतिशत जन संख्या गरीबी रेखा के नीचे अभावों से ग्रसित नारकीय जीवन जीने के लिए मजबूर है। जिनमें श्रमिकों की संख्या अच्छी खासी है। इस वास्तविकता से इन्कार नहीं किया जा सकता कि श्रमिकों की स्थिति सुधारने के लिए लगातार प्रयत्न किए जा रहे हैं। आवश्यकता इस बात की है कि उत्पादकता वर्ष में श्रमिक कुण्ठा के कारणों की खोज करके श्रमिकों की समस्याओं का व्यावहारिक हल निकाला जाए। जिससे श्रम के संदर्भ में उत्पादकता वृद्धि का स्थाई और कारगर उपाय मिल जाए।

श्रमिक कुण्ठा क्यों ?

- कम मजदूरी उस पर मंहगाई के कारण रोजमर्रा की जरुरी आवश्यकताएं भी

पूरी नहीं होतीं। फलस्वरूप श्रमिक मानसिक रूप से विक्षिप्त रहते हैं।

- आर्थिक अभाव श्रमिक को खोखला बना देते हैं। परिणामस्वरुप अत्यधिक ऋण-ग्रस्तता ब्याज के बोझ को बढ़ा कर मानसिक तनाव उत्पन्न कर देती हैं।
- आर्थिक आय के लालच में श्रमिक शारीरिक क्षमता व थकान की चिंता किए बगैर ओवर टाइम करके अपने शरीर को कमजोर और स्वभाव को असामान्य बना लेते हैं।
- निम्न जीवन-स्तर और गन्दे आवास के कारण बीमारियों से घिरे रहना और उस पर इलाज की सुविधा न मिलना श्रमिक उत्साह को तोड़ देता है।
- छोटे आवास में अधिक श्रमिकों के रहने के कारण शारीरिक सम्बन्धों पर से पर्दा उठ जाता है। जिससे नैतिक पतन व्यभिचार और वैश्यावृत्ति के रूप में पनपता है।
- अज्ञानता व मनोरंजन सुविधाओं के अभाव के कारण श्रमिकों के यहां सन्तानों की संख्या अधिक होती है जिनका पालन पोषण अर्थाभाव की दशा में बोझ बन कर श्रमिकों की परेशानी का कारण बनता है।
- औद्योगिक क्षेत्रों में बहुत से कारणों से श्रमिक शराब, जुआ, चोरी आदि कुटैबों के शिकार होकर दयनीय स्थिति में पहुंच जाते हैं।
- सामाजिक रूढ़ियों में आस्था के कारण रीति रिवाजों को पूरा करने में न्यून आय आड़े आती है। इससे श्रमिक का मन खिन्न रहता है।
- भाग्यवादी प्रवृत्ति श्रमिक को अकर्मण्य, प्रमादी, कामचोर व भीरू बना देती है।
- शिक्षा, प्रशिक्षण या अनुभव के अभाव में कार्य के प्रति भय बना रहता है। कहीं बिगड़ गया तो? यह प्रश्न चिन्ह उसके विकास में बाधक बनता है। आत्मा अभि-व्यक्ति में भी संकोच बना रहता है।
- कार्य, रुचि के अनुरुप न होने के बाद भी अनेक बार मजबूरी की दशा में अपनाया जाता है, ऐसा कार्य श्रमिक को बोझ महसूस होता है। फलस्वरूप वह कार्य से जी चुराता है।
- जो व्यक्ति मजबूरियों के कारण बाल-पन से ही श्रमिक बन कर थोड़ा बहुत कमाने की मशीन बन जाते हैं। उनका उचित प्रकार से विकास नहीं हो पाता। जिस कारण उनमें आत्म विश्वास की कमी रहती है।
- दुर्भाग्यवश सामन्तवादी प्रवृत्ति के कारण परिस्थितिवश बने बन्धक मजदूरों में उत्साह और मनोबल का अभाव रहता है। वे सदैव भय और निराशा से ग्रसित रहते हैं।
- भारत में स्त्रियां मजबूरी की दशा में काम को निकलती हैं। उस पर समाज की कुत्सित दृष्टि, मातृत्व. शारीरिक क्षमता व रचना सम्बन्धी अनेकों समस्याएं उसको कमजोर बनाए रखती हैं।
- श्रमिक की कोई जाति अथवा क्षेत्र नहीं होता फिर भी श्रमिकों में इस आधार पर हीन भावना घर किए रहती है, यह भावना आपसी संघर्ष का कारण बनकर ग्रुपबाजी को बढ़ावा देती है।
- बाह्य तत्व अपने स्वार्थों को पूरा करने के लिए श्रमिकों को उकसा कर गलत राह पर डाल देते हैं। परिणामस्वरूप विध्वंसात्मक प्रवृत्ति पनपने लगती है।

जॉब सम्बन्धी कारण :

- खराब कार्य दशाएं श्रमिकों में कार्य के प्रति अरुचि उत्पन्न करती हैं।
- कार्य के घण्टे अधिक होने से श्रमिकों पर एक मानसिक दबाव बना रहता है।
- आवश्यक होने पर छुट्टी न मिलने से श्रमिकों में विरोध भावना पनपती है।
- कारखाने में समय-समय पर होने वाली दुर्घटनाओं के कारण श्रमिकों में भय घर कर जाता है।
- अस्थायी नियुक्ति की दशा में न तो कार्य के प्रति सुरक्षा की भावना पैदा होती है और न ही संस्था के प्रति वफादारी का विकास होता है।
- संस्था की ओर से आवास, बिजली, पानी मनोरंजन, शिक्षा आदि सुविधाओं के न मिलने के कारण श्रमिक कठिनाई महसूस करते हैं।
- प्रबन्ध के अयोग्य व व्यवहार कुशल न होने पर श्रमिक उनके प्रति अच्छा दृष्टिकोण नहीं रखते। मधुर व्यवहार न मिलने पर वे प्रबन्ध को अपना हितैषी नहीं समझते।
- बिना कारण या प्रभावपूर्ण सम्प्रेक्षण के अभाव में अनजाने में होने वाली छोटी सी गलती का बड़ा दण्ड श्रमिकों को मानसिक आघात पहुंचाता है।

कुण्ठा निवारण के उपाय

- 'भूखे भजन न होये गोपाला'। आर्थिक युग को दृष्टिगत रखते हुए यह आवश्यक है कि श्रमिकों को इतनी आय अवश्य हो जाए कि वे अपने परिवार की दैनिक आवश्यकताओं को पूरा कर लें जिससे वे घरेलू समस्याओं के दबाव से मुक्त रहें। इसके लिए कार्य मूल्यांकन के आधार पर प्रेरणात्मक मजदूरी के अतिरिक्त अच्छे कार्य के लिए अतिरिक्त पुरस्कार दिया जाना श्रेयस्कर रहता है।
- अति आवश्यक होने पर संस्था से अग्रिम या ऋण की सुविधा श्रमिकों को अन्यत्र होने वाले शोषण से बचा सकती है।
- अच्छी कार्यदशाएं श्रमिकों को मन लगाकर कार्य करने के लिए प्रोत्साहित करती हैं। प्रयोगों से सिद्ध हो चुका है कि कम कार्य के घण्टे, मनोरंजन सुविधाएं, उत्तम कार्य दशाएं श्रमिकों को सामान्य बना कर उत्पादन बढ़ाने में सहायक होती हैं।
- अनिवार्य सुविधाओं से युक्त स्वच्छ आवास उपलब्ध कराने से स्वयं ही अनेक समस्याओं का समाधान हो जाता है जिससे श्रमिक तनाव मुक्त होकर रचनात्मक कार्य में अधिक योग देते हैं। मार्शल का निष्कर्ष है—कोई भी शिशु जो अंधेरे मकान में जन्मा हो, अशिक्षित मां द्वारा जिसका पालन हुआ हो, जो लाभकारी बाहरी प्रभावों के

अभाव में युवा हुआ हो, कभी भी अच्छा श्रमिक और सम्मानित नागरिक नहीं बन सकता।

- शिक्षा व ज्ञान कुण्ठाओं के निदान के लिए आवश्यक माध्यम है। अल्पकालीन पाठ्यक्रम, सम्मेलन, छपी हुई सामग्री छायाचित्र, प्रदर्शनी, दीवार लेखन आदि के माध्यम से श्रमिकों को सामान्य शिक्षा, कार्य सम्बन्धी ज्ञान, परिवार नियोजन, राष्ट्रीय चेतना आदि की जानकारी देने से उत्पादकता पर अच्छा प्रभाव पड़ सकता है।

- श्रमिकों से कार्य की दृष्टि से परामर्श लेना और उनकी समस्याओं के समाधान के लिए परामर्श देना, उनमें निष्ठा उत्पन्न करने का बड़ा ही कारगर उपाय है। इससे उनको कुसंगति में फंसकर भ्रमित होने से भी बचाया जा सकता है।

- धन ही सब कुछ नहीं होता। प्रेम और सम्मान सभी चाहते हैं। प्रबन्ध का मधुर व्यवहार अवित्तीय प्रेरणा बनकर श्रमिकों में संस्था के प्रति अपनत्व भाव पैदा करता है। फिर श्रमिकों के मन में बनी हीन ग्रन्थि स्वतः ही समाप्त हो जाती है।

- श्रमिको की भर्ती सिफारिश आदि के आधार पर नहीं होनी चाहिए। सही व्यक्ति को सही कार्य पर नियुक्त करने से कार्य को गति मिलती है।

- यों तो मशीनों के प्रयोग में आकस्मिक दुर्घटनाओं की सम्भावना बनी रहती है फिर भी दुर्घटनाओं के नियन्त्रण के लिए प्रभावशाली व्यवस्था होनी चाहिए। दुर्घटना की दशा में क्षति-ग्रस्त श्रमिक को जोखिम का अच्छा पुरस्कार श्रमिकों को निर्भय होकर काम करने के लिए प्रेरित करता है।

- लाभ नियोक्ता और श्रमिकों के मिश्रित उद्यम का फल है। अत. श्रमिकों को लाभ में से हिस्सा मिलना चाहिए। इससे उनके मन में यह भाव जाग्रत होगा कि संस्था का लाभ मेरा लाभ है और संस्था की हानि मेरी हानि है।

कैसे होते गांव ?

अब्दुल मलिक खान

मां-मां हमको भी बतलाओ
कैसे होते गांव ?

नदी किनारे कैसी लगती
बड़ पीपल की छांव

कैसे खेत जुते जाते हैं
कैसे उगते बीज

डफ बजती होली पर कैसी
कैसे मनती तीज

कैसी गैया, कैसे ग्वाले
कैसी संध्या भोर

किसे रिझाती कोयल काली
कहां नाचता मोर

डाल-डाल कैसे गाती है
हरियाली के गीत

मां ऐसा क्या है गांवों में
जो मन लेता जीत

बेटा, गांव गांव होते हैं
खुली हवा औ' धूप

गांवों में निखरा रहता है
इस धरती का रूप

मेहनत के मोती उपजाते
नए-नए उपहार

सुनो गांव में एक धर्म है
हर प्राणी से प्यार

- प्रबन्ध में श्रमिकों का प्रतिनिधित्व उनको आत्माभिव्यक्ति का अवसर देकर उनमें विश्वास का संचार करता है।

श्रमिक कुण्ठा मौन हो या वाचाल, उत्पादकता घटाती है। हड़ताल, संघर्ष तोड़फोड़, गो-स्लो-वर्क, आदि क्रियाएं श्रमिक कुण्ठा के बाह्य स्वरूप को प्रकट करती हैं। समस्याओं से ग्रसित श्रमिक भीतर ही भीतर कितना घुलते रहते हैं इसका आभास प्रत्यक्ष न होकर कम उत्पादकता के रूप में प्रकट होता है उत्पादकता वर्ष में जहां श्रमिकों से अपेक्षाएं हैं कि वे पूरी निष्ठा के साथ कार्य के प्रति समर्पित होकर उत्पादकता वृद्धि में अधिकतम योगदान दे। वहीं आवश्यकता इस बात की है कि मनोवैज्ञानिक आधार पर उनकी मौद्रिक तथा अमौद्रिक सभी प्रकार की समस्याओं का व्यावहारिक समाधान ढूंढ़ कर उनको कुण्ठा मुक्त किया जाए जिससे वे भौतिक व भावनात्मक सन्तुष्टि प्राप्त करके उत्पादन एवं उत्पादकता वृद्धि में अपना पूर्ण सहयोग दे सकें। इसके लिए नियोक्ता और सरकार के दृष्टिकोण में परिवर्तन के साथ-साथ श्रम कानूनों में व्याप्त जटिलताओं और विषमताओं में भी पर्याप्त संशोधन की आवश्यकता है। □

राकेश कुमार अग्रवाल
पोस्ट ग्रेजुएट डिपार्टमेंट आफ कामर्स
एम० एम० वी० कालिज
हापुड़ (उ० प्र०)

कृषि इंजीनियरी विशेषांक का विमोचन

इंस्टिट्यूशन के दिल्ली राज्य केन्द्र और केन्द्रीय सचिवालय हिन्दी परिषद् के संयुक्त तत्वावधान में बुधवार, दिनांक 24 फरवरी, 1982 को माननीय श्री बालेश्वर राम, केन्द्रीय राज्य मंत्री, कृषि एवं ग्रामीण विकास मंत्रालय ने इंस्टि-ट्यूशन के सभागार में 'जरनल आफ दि इंस्टिट्यूशन आफ इंजीनियर्स' के हिन्दी विभाग के "कृषि इंजीनियरी विशेषांक" का विमोचन किया। इंस्टिट्यूशन के मंत्री एवं महानिदेशक कर्नल भगवान टेकचंद नागरानी ने समारोह की अध्य-क्षता की। श्री जयनारायण तिवारी, सचिव, राजभाषा विभाग, भारत सरकार भी समारोह में उपस्थित थे। कृषि और सहकारिता विभाग, कृषि एवं ग्रामीण विकास मंत्रालय के सचिव श्री शंकर प्रसाद मुखर्जी स्वयं उपस्थित न हो सके। उन्होंने अपना लिखित संदेश भेज कर इंस्टिट्यूशन को बधाई दी। समारोह की कार्रवाई श्री कृष्णदत्त शर्मा द्वारा सरस्वती वंदना से आरम्भ हुई। केन्द्रीय सचिवालय हिन्दी परिषद् के उप-प्रधान श्री पन्नालाल शर्मा (जज एडवोकेट, नौसेना मुख्यालय) ने माननीय मंत्री जी का स्वागत करते हुए बिहार सरकार में लोक निर्माण विभाग, श्रम विभाग, पर्यटन विभाग, आदि के मंत्री के रूप में और फिर केन्द्रीय सरकार में कृषि और ग्राम विकास राज्य मंत्री के रूप में उनकी सेवाओं की सराहना की। राजभाषा विभाग के सचिव श्री तिवारी का परिचय भी श्री शर्मा ने दिया और समारोह में भाग लेने वाले सभी इंजीनियरों, विद्वानों और हिन्दी प्रेमियों का स्वागत किया।

इंस्टिट्यूशन के मंत्री एवं महानिदेशक श्री नागरानी ने माननीय राज्य मंत्री के प्रति आभार व्यक्त करते हुए इंस्टिट्यूशन का संक्षिप्त परिचय दिया। उन्होंने बताया कि इस समय इंस्टिट्यशन के कारपोरेट मेम्बर और छात्र सब मिला-कर लगभग डेढ़ लाख सदस्य हैं। कार्यरत इंजीनियरों की शिक्षा जारी रखने के लिए इंस्टिट्यूशन एक इंजीनियरिंग स्टाफ कालेज भी चला रहा है। चार्टर प्राप्त यह इंस्टिट्यूशन एक बहुत बड़ी, शायद संसार की सबसे बड़ी, शिक्षण संस्था है जिसे कानूनी तौर से एक विश्व-विद्यालय का दर्जा प्राप्त है। इसकी गतिविधियां अंतर्राष्ट्रीय क्षेत्र में भी बहुत महत्वपूर्ण हैं। राजभाषा के क्षेत्र में उन्होंने इंस्टिट्यूशन के हिन्दी विभाग की सेवाओं का उल्लेख करते हुए कहा कि केन्द्रीय सरकार से इंस्टिट्यूशन को जो आर्थिक सहायता मिलती है वह इसके व्यापक कार्यक्षेत्र को देखते हुए अपर्याप्त है। हिन्दी विभाग में प्रकाशित सर्व-श्रेष्ठ निबंधों के लिए दिया जाने वाला राष्ट्रपति पारितोषिक (हिन्दी) का भी मूल्य बढ़ाकर इसकी प्रतिष्ठा के अनुरूप कर देना चाहिए।

केन्द्रीय सचिवालय हिन्दी परिषद् के प्रचार मंत्री एवं संयोजक राज-भाषा कार्य, श्री जगन्नाथ ने परिषद का परिचय देते हुए कहा कि इस समय देश में इसकी 400 से अधिक शाखाएं हैं जिनके माध्यम से यह केन्द्रीय सरकार की राजभाषा नीति के कार्यान्वयन के लिए रचनात्मक प्रयास करती है और सरकारी कर्मचारियों तथा अधिकारियों को हिन्दी के प्रयोग के लिए मानसिक रूप से तैयार करती है। उपयोगी साहित्य निर्माण के अतिरिक्त हिन्दी आशु-लिपिक, हिन्दी टाइपिंग, निबंध लेखन, हिन्दी टिप्पण और प्रारूप लेखन आदि की प्रतियोगिताएं भी आयोजित करती है जिनमें अहिन्दी-भाषी व्यक्ति भी पूरे उत्साह से भाग लेते हैं और पुरस्कार प्राप्त करते हैं। परिषद् की एक द्वि-मासिक पत्रिका "हिन्दी परिचय" निकलती है जिसके प्रत्येक अंक की लगभग 40,000 प्रतियां छपती हैं। इसमें कविता-कहानी आदि नहीं, बल्कि हिन्दी के प्रयोग संबंधी सरकारी आदेश, मसौदा लेखन, टिप्पणियां लेखन, शब्दावली आदि के बारे में महत्वपूर्ण सामग्री रहती है। श्री जगन्नाथ जी ने यह भी बताया कि परिषद् ने जो कार्य अपने हाथ में लिए हैं वे ऐसे हैं जो अन्य संस्थाओं द्वारा नहीं किए जाते। उदाहरण के लिए हिन्दी आशुलिपि और हिन्दी टाइपिंग प्रतियो-गिताएं। जो कार्य अन्य संस्थाएं करती हैं वे कार्य परिषद् नहीं करती, अपितु उन कार्यों के लिए परिषद् उन संस्थाओं को सहयोग देती है। इस प्रकार परिषद् अन्य हिन्दी-सेवी संस्थाओं की एक प्रति-द्वन्द्वी संस्था नहीं, अपितु पूरक संस्था है।

श्री जगन्नाथ ने इंस्टिट्यूशन आफ इंजीनियर्स के पदाधिकारियों से निवेदन किया कि वे अपने प्रशासनिक कार्यों में हिन्दी का प्रयोग बढ़ाएं। अपने सभी फार्म, स्टेशनरी और रबड़ की मोहरें आदि द्विभाषी रूप में बनवाएं जिनमें हिन्दी ऊपर रहे और अंग्रेजी नीचे, जैसा कि भारत सरकार के कार्यालयों में होता है। उन्होंने इंस्टिट्यूशन के अधि-कारियों से यह भी अपील की कि वे अपनी परीक्षाओं में हिन्दी के वैकल्पिक प्रयोग की सुविधा दिए जाने के विषय में क्रमिक रूप में पग उठाएं जिससे कि यह संस्था वास्तविक रूप से एक राष्ट्रीय संस्था बन सके। अब जबकि संघ लोक सेवा आयोग ने भारतीय सिविल सेवा परीक्षा जैसी उच्च कोटि की परीक्षाओं में भारतीय भाषाओं का विकल्प दे दिया है तो कोई कारण नहीं कि यह मूर्धन्य संस्था भी इस राष्ट्रीय नीति को न अपनाए।

इस अवसर पर भारत सरकार के राजभाषा विभाग के सचिव श्री जय-नारायण तिवारी ने इंजीनियरों का आह्वान किया कि वे अभी से ऐसे गंभीर प्रयास करें कि कम्प्यूटर आदि और इसी प्रकार के अन्य यंत्र हिन्दी में भी काम कर सकें, क्योंकि देश में इन मशीनों का प्रयोग तेजी से बढ़ता जा रहा है जिसके कारण उन क्षेत्रों में भी जहां

हिन्दी का प्रयोग होने लगा था, अब फिर से अंग्रेजी का प्रयोग होने लगा है।

तदनन्तर जरनल के हिन्दी विभाग के आनरेरी तकनीकी सम्पादक श्री विश्वंभर प्रसाद "गुप्तबंधु" ने अपने निवेदन में हिन्दी विभाग का परिचय देते हुए हिन्दी जरनल की बढ़ती हुई मांग का उल्लेख किया और इसकी आवर्तिता बढ़ाने की आवश्यकता बताई। फिर विशेषांक की पृष्ठभूमि और विशेषताओं पर प्रकाश डालते हुए विशेषांक सम्पादन मण्डल के वरिष्ठ सदस्य, श्री करतार सिंह यादव, संयुक्त आयुक्त (मशीनरी), केन्द्रीय कृषि विभाग ने ऐसे-ऐसे तथ्य उजागर किए जिनके बारे में प्राय लोगों को बहुत की कम जानकारी हुआ करती है।

इसके बाद माननीय राज्य मंत्री जी ने विशेषांक का विमोचन किया। अपने भाषण में उन्होंने कहा कि इस उत्पादन वर्ष में यह जरूरी है कि कृषि संबंधी तकनीक को गांवों में ले जाया जाए जिससे कृषि के क्षेत्र में अधिक उपज हो। यह तभी सम्भव हो सकता है, जब कृषि विज्ञान संबंधी साहित्य हिन्दी एवं अन्य भारतीय भाषाओं में भी हो। मंत्री जी ने राजभाषा हिन्दी के प्रति दोनों संयोजक संस्थाओं की सेवाओं की मुक्त कण्ठ से सराहना की और आशा की कि ये संस्थाएं इंजीनियरी के क्षेत्र में और भी साहित्य हिन्दी में प्रकाशित करेंगी।

समारोह के अध्यक्ष कर्नल नागरानी ने माननीय मंत्री जी को और श्री जयनारायण तिवारी को विश्वास दिलाया कि इंस्टिट्यूशन इस दिशा में भरसक प्रयत्न करेगा। अनेक वक्ताओं ने इस अवसर पर यह भी मांग की कि कृषि वैज्ञानिक नियुक्ति मंडल द्वारा ली जाने वाली भर्ती परीक्षा "कृषि अनुसंधान सेवा," संघ लोक सेवा आयोग द्वारा ली जाने वाली "भारतीय वन सेवा" और "भारतीय इंजीनियरी सेवा" आदि में भी हिन्दी के वैकल्पिक प्रयोग की सुविधा दी जाए।

अंत में इंस्टिट्यूशन के दिल्ली राज्य केन्द्र के आनरेरी सैक्रेटरी विंग कमांडर जे० एल० कंवर ने मुख्य अतिथियों और श्रोताओं को धन्यवाद दिया।

मंच का संचालन केन्द्रीय सचिवालय हिन्दी परिषद् के महामंत्री डा० सूरजपाल शर्मा ने किया।

कृषि मंत्री को विशेषांक भेंट

अगले दिन 25 फरवरी, 1982 को ग्रामीण विकास मंत्रालय की हिन्दी सलाहकार समिति की बैठक में परिषद् के उप-प्रधान श्री पन्नालाल शर्मा ने विशेषांक की एक प्रति राव वीरेन्द्र सिंह, मंत्री, कृषि एवं सहकारिता मंत्रालय, ग्रामीण विकास मंत्रालय और नागरिक आपूर्ति मंत्रालय को भेंट की। विशेषांक की प्रतियां सलाहकार समिति के अन्य सदस्यों को भी भेंट की गई जिनमें अनेक संसद सदस्य और वरिष्ठ साहित्यकार भी थे। सभी ने इस विशेषांक की मुक्त कंठ से प्रशंसा की। □

जनतंत्र में जनता और जननायक की भाषा एक हो

"भारत एक जनतन्त्र है। जनतान्त्रिक व्यवस्था में यह जरूरी है कि जननायक और जनता, शासक और प्रजा की भाषा एक हो और उनके बीच विदेशी भाषा की दीवार न खड़ी रहे।" ये शब्द हैं जो संसदीय राजभाषा उप समिति के संयोजक एवं वरिष्ठ सांसद श्री योगेन्द्र शर्मा ने केन्द्रीय सचिवालय हिन्दी परिषद की अखिल भारतीय आशुलिपि एवं टाइपिंग प्रतियोगिता का उद्घाटन करते हुए कहे। उन्होंने कहा कि इस तकनीकी युग में जहां तीव्र गति पर सरकार के कार्य होने जरूरी हैं, हिन्दी आशुलिपिकों और हिन्दी टाइपिस्टों का महत्व और भी अधिक बढ़ गया है और भाषा की समृद्धि में उनका योगदान साहित्य सेविकाओं से कम नहीं है। इस दृष्टि से परिषद ने इस प्रतियोगिता का संचालन करके एक बहुत बड़ा रचनात्मक कार्य किया है और हिन्दी जगत को अनेक उच्च कोटि के हिन्दी आशुलिपिक टाइपिस्ट प्रदान किए हैं।

ये प्रतियोगिताएं देश के लगभग 130 केन्द्रों पर आयोजित हुईं जिनमें हैदराबाद सरीखे दक्षिण के नगर भी हैं। दिल्ली केन्द्र पर लगभग 130 प्रतियोगियों ने इस प्रतियोगिता में भाग लिया।

समारोह की अध्यक्षता ग्रामीण पुनर्निर्माण मन्त्रालय के सचिव एवं हिन्दी परिषद के अखिल भारतीय प्रधान श्री सुशील चन्द्र वर्मा ने की। उन्होंने अपने अध्यक्षीय भाषण में कहा कि आप विश्वास रखिए कि हिन्दी का भविष्य उज्ज्वल है और यह बात मैं अपने प्रशासनिक अनुभव के आधार पर कह सकता हूं।

परिषद के कार्यकलापों और प्रतियोगिताओं का परिचय परिषद् के महामन्त्री श्री जगन्नाथ ने कराया तथा कार्यक्रम का संयोजन श्री रघुनन्दन प्रसाद शर्मा ने किया। मंच संचालन प्रतियोगिता मन्त्री श्री राममूर्ति भारद्वाज ने किया है।

इस अवसर पर राज्य सभा और लोक सभा के वरिष्ठ हिन्दी रिपोर्टर श्री गोपाल दत्त बिष्ट, श्री सत्य प्रकाश सनोचा आदि भी उपस्थित थे।

केन्द्र के समाचार

किसानों के लिए विशाल अल्पकालिक ऋण

इस वर्ष खरीफ के मौसम में अच्छी पैदावार के लिए कृषि मंत्रालय ने 20 राज्यों में किसानों के लिए 100 करोड़ रुपये का विशाल अल्पकालिक ऋण जारी किया है ताकि वे उर्वरक, बीज और कीटनाशक दवाईयों आदि की व्यवस्था कर सकें। खरीफ की पिछली फसल के लिए 64.43 करोड़ रुपये का ऋण जारी किया गया था।

उत्तरी और पश्चिमी राज्यों को जहां बेमौसम बरसात के कारण कटी हुई गेहूं की फसल को हानि हुई है अल्पकालिक ऋण अधिक मात्रा में मिलेगा जिससे कि किसान खरीफ की पैदावार में वृद्धि कर रबी की फसल में हुई क्षति की पूर्ति कर सकें।

उदाहरणार्थ पंजाब को पिछले खरीफ के मौसम में मिली 2.50 करोड़ रुपये की राशि की तुलना में इस साल 10 करोड़ रूपये मिलेगा। इसी प्रकार राजस्थान के लिए यह राशि 5 करोड़ से बढ़ाकर 7 करोड़, हरियाणा के लिए 2.50 करोड़ से बढ़ाकर 6.75 करोड़ और उत्तर प्रदेश के लिए 10 करोड़ से बढ़ाकर 15 करोड़ कर दी गई है। गुजरात को भी इसी प्रकार 5 करोड़ रुपये से बढ़ाकर 8.5 करोड़ रुपये और हिमाचल को 15 लाख रुपये से बढ़ाकर 50 लाख दिये जाएंगे।

दूसरे राज्यों को भी नए 20 सूत्री कार्यक्रम और उत्पादकता वर्ष के संदर्भ में अल्पकालिक ऋण मिलेंगे जिससे कि अधिक उपज वाले बीजों, उर्वरकों और कीटनाशक दवाइयों की सहायता से अनुसूचित क्षेत्रों में तिलहनों एवं दालों की फसलों की अच्छी पैदावार कर सकें। उदाहरण के लिए मध्य प्रदेश और महाराष्ट्र में से प्रत्येक के लिए 8 करोड़ की राशि निर्धारित की गई है। जबकि पिछले खरीफ के मौसम में उनको क्रमशः 6 करोड़ और 3 करोड़ रुपये मिले थे।

अनाज की बर्बादी को रोकना आवश्यक

केन्द्रीय कृषि मंत्री, राव बीरेन्द्र सिंह ने फसल की कटाई के बाद अनाज की होने वाली बर्बादी को रोकने के लिए शीघ्र और कारगर उपाय करने को कहा है।

मंत्री महोदय आज यहां दक्षिण एशिया तथा मध्य-पूर्वी और दक्षिणी अफ्रीका के राष्ट्रमंडल देशों के छोटे किसानों की अनाज भंडारण की आवश्यकता और फसल की कटाई के बाद अनाज की होने वाली बर्बादी विषय पर पांच-दिवसीय कार्यशाला का उद्घाटन कर रहे थे। इस कार्यशाला का आयोजन राष्ट्रमंडल सचिवालय ने कृषि मंत्रालय के खाद्य विभाग के सहयोग से किया है। कार्यशाला में अन्य लोगों के अलावा बंगलादेश, कीनिया, मलयेशिया, तंजानिया, ऊगांडा, जाम्बिया तथा जिम्बाबवे के विशेषज्ञ भाग ले रहे हैं।

राव बीरेन्द्र सिंह ने परम्परागत भंडारण प्रणाली में सुधार का सुझाव दिया और कहा कि अनाज की उपज का 70 प्रतिशत भाग फार्म स्तर पर ही रोका जाता है। इसलिए इस स्तर पर सुधार को प्राथमिकता दी जानी चाहिए क्योंकि इससे देश में खाद्यान्नों की कुल उपलब्धता पर असर पड़ता है। उन्होंने कहा कि परम्परागत भंडारण प्रणाली को आधुनिक बनाया जाना चाहिए। मंत्री महोदय ने कहा कि सरकार फसल की कटाई के बाद की गतिविधियों के दौरान अनाज की होने वाली बर्बादी की रोकथाम के संबंध में विस्तृत कार्यक्रमों के प्रस्तावों पर पहले ही विचार कर रही है। किसानों के लाभ के लिए टिकाऊ खाद्यान्नों के लिए ग्रामीण गोदामों के निर्माण की एक योजना शुरु की गई है। उन्होंने आशा व्यक्त की कि इस सुविधा की उपलब्धि के बाद किसानों को जल्दबाजी में अनाजों की बिक्री न करने में मदद मिलेगी।

कृषि योजनाओं में अधिक लचीलापन

कृषि मंत्रालय द्वारा चालू उत्पादकता वर्ष के दौरान केन्द्र की सहायता से चलाई जा रही कृषि परियोजनाओं के संचालन को और लचीला बना दिया गया है। ऐसा अनाजों, तिलहनों, दालों, कपास और पटसन जैसी फसलों के उत्पादन में वृद्धि करने के कार्यक्रमों के तेजी से कार्यान्वियन को सुनिश्चित करने के लिए किया गया है।

राज्य सरकारों को अब केन्द्र द्वारा प्रायोजित परियोजनाओं के स्वीकृत संघटकों के बीच प्रत्येक योजना के अंतर्गत स्वीकृत व्यय के 25 प्रतिशत तक की धनराशि के पुनर्विनियोग की सुविधा की अनुमति होगी। इससे पूर्व राशि के पुनर्विनियोग की सीमा 15 प्रतिशत थी।

राज्य सरकारों को तिलहनों, दालों, कपास और पटसन सहित विभिन्न फसलों के विकास के लिए केन्द्र द्वारा प्रायोजित परियोजनाओं को इन फसलों को पैदा करने की क्षमता वाले सभी क्षेत्रों में बढ़ाने की अनुमति होगी परन्तु शर्त यह है कि किसी विनिर्दिष्ट योजना का कुल व्यय उस योजना के स्वीकृत परिव्यय से अधिक नहीं होना चाहिए। तिलहनों के विकास के लिए केन्द्र द्वारा प्रायोजित योजना सभी प्रकार के तिलहनों की फसल पर लागू होगी।

चालू वित्तीय वर्ष से प्रभावी इन निर्णयों के बारे में सभी राज्य सरकारों को सूचित कर दिया गया है।

बायोगैस संयंत्र

पांचवीं योजना के दौरान गांवों में बायोगैस संयंत्रों की स्थापना स्थानीय खाद संबंधी संसाधनों के विकास के लिए केन्द्रीय योजना का एक भाग था जिसके लिए 16.54 करोड़

रुपये के परिव्यय की व्यवस्था की गई थी। योजना अवधि के दौरान केन्द्रीय राज सहायता के रूप में 565.77 लाख रुपये निर्मुक्त किए गए थे। इसके अलावा, पांचवीं योजना की विभिन्न देयताओं के लिए 1979-80 के दौरान 120 लाख रुपये निर्मुक्त किए गए थे।

योजना अवधि (1974-75 से 1978-79) के लिए निर्धारित 1,00,000 इकाइयों की स्थापना के लक्ष्य की तुलना में देश में 70,000 से अधिक बायोगैस इकाइयां स्थापित होने की सूचना मिली थी।

बायोगैस विकास की राष्ट्रीय परियोजना के लिए योजना आयोग द्वारा छठी योजना अवधि के लिए मंजूर किया गया परिव्यय 50 करोड़ रुपये है। मौजूदा परिव्यय से मेल रखने के लिए परियोजना में 4,00,000 बायो गैस इकाइयों की स्थापना का वास्तविक लक्ष्य रखा गया है। राज्यों को लक्ष्यों की उपलब्धि के अनुरूप राशि आबंटित की जाएगी। इस समय सामुदायिक संयंत्रों की वित्तीय व्यवस्था इस परियोजना से नहीं की जाती है।

बायोगैस कार्यक्रम के लिए बहु-एजेंसी दृष्टिकोण अपनाया गया है। इसके अलावा राज्य सरकारें तथा खादी व ग्रामोद्योग आयोग/बोर्ड, गठित निकायों जैसे राज्य कृषि उद्योग निगम तथा ग्रामों पर आधारित मान्यताप्राप्त स्वयं सेवी संगठनों को बायो गैस इकाइयों की स्थापना करने के लिए कार्यक्रम में शामिल किया जा रहा है।

शुष्क भूमि पर खेती

केन्द्र सरकार ने राज्य सरकारों से कहा है कि वे सूखा बहुल क्षेत्रों में सूखाबहुल क्षेत्र कार्यक्रम के लिए उपलब्ध धन-राशि से शुष्क भूमि में उन्नत किस्म की खेती करने के कार्य को प्रोत्साहन देने हेतु कदम उठाएं।

राज्यों को भेजे गए एक संदेश में ग्रामीण विकास मंत्रालय ने इस संबंध में मार्ग निर्देश भेजे हैं जिसमें प्रत्येक लगभग 100 एकड़ क्षेत्र का एक ठोस खण्ड चुनने की व्यवस्था है जहां पर उपलब्ध प्रौद्योगिकी का प्रदर्शन किया जा सके। इसका उद्देश्य उपलब्ध जल तथा नमी जैसे संसाधनों का भरपूर उपयोग करना है।

जिन-जिन क्षेत्रों में प्रौद्योगिकी का प्रदर्शन किया गया है वहां हुई पैदावार की तुलना उससे पहले हुई पैदावार से की जाएगी तथा नई प्रौद्योगिकी की क्षमता तथा महत्व की जानकारी स्थानीय किसानों को दी जाएगी।

सूखाग्रस्त क्षेत्र का कार्यक्रम के अन्तर्गत 13 राज्यों के 73 जिलों के 554 ब्लाक शामिल हैं। ये 13 राज्य हैं—आंध्र प्रदेश, बिहार, गुजरात, हरियाणा, जम्मू व कश्मीर, कर्नाटक, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, उड़ीसा, राजस्थान, तमिलनाडु, उत्तर प्रदेश तथा पश्चिम बंगाल। छठी योजना में इस कार्यक्रम के लिए 175 करोड़ रु० रखे गए हैं और इसमें से केन्द्र तथा राज्य सरकारों का आधा-आधा हिस्सा है।

कुक्कुट विकास

पिछले 15 वर्षों के दौरान, देश में कुक्कुट उत्पादन में अपूर्व विकास हुआ है। वर्ष 1981-82 में अण्डों का राष्ट्रीय उत्पादन वर्ष 1961 के 28,810 लाख से बढ़कर 1981-82 में 1,30,000 लाख हो गया। इसी प्रकार ब्रायलरों का उत्पादन 1971 के 40 लाख से बढ़कर 1981-82 में करीब 350 लाख हो गया। सार्वजनिक और निजी दोनों क्षेत्रों के अनेक कुक्कुट प्रजनन फार्मों ने, बढ़िया नस्ल के कुक्कुटों के संबंध में देश को आत्मनिर्भर बनाने के लिए वैज्ञानिक आधार पर प्रजनन कार्यक्रम शुरू किया है। तथापि, आहार में बढ़ते हुए मूल्यों और अण्डों के वास्तविक रूप से स्थिर औसतन थोक मूल्यों से कुक्कुट उत्पादन की अर्थव्यवस्था में बाधा उत्पन्न हुई है और जिसके लिए आवश्यक कदम उठाए जा रहे हैं।

भेड़ विकास

भारत में विश्व की कुल भेड़ों की संख्या की 4.1 प्रतिशत भेड़ें हैं और भेड़ पालन में यह छठा सबसे बड़ा देश है। ऊन का अनुमानित उत्पादन 350 लाख किलोग्राम है और उसमें अधिकांश भाग का कालीन विनिर्माण में उपयोग किया जाता है। राज्यों में क्रियान्वित किए जा रहे विभिन्न भेड़ विकास कार्यक्रमों का उद्देश्य विदेशी मेरिनो भेड़ों के साथ संकर प्रजनन के द्वारा हमारी भेड़ों का आनुवंशिक सुधार करना है और इस प्रकार बढ़िया किस्म की ऊन की उत्पादकता को बढ़ाना है। इस उद्देश्य के लिए देश में अब तक 14,017 मेरिनो भेड़ों का आयात किया गया है। केन्द्रीय पशु प्रजनन फार्म, हिसार (हरियाणा) ने प्रजनन के उद्देश्यों से विभिन्न राज्यों को 3,852 कोरीडेल और संकर प्रजनित भेड़ों का उत्पादन और वितरण किया है।

छोटे किसानों के जीवन स्तर में सुधार

हाल ही में जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय द्वारा पंजाब में हरित क्रान्ति के प्रभाव का अध्ययन किया गया था। उनकी रिपोर्ट में बताया गया है कि एक चौथाई हिस्सा छोटे किसानों का गरीबी की रेखा से नीचे जीवन यापन करता है। छठी योजना के दस्तावेज से पता चलता है कि 1977-78 में पंजाब में 11.87 प्रतिशत ग्रामीण लोग गरीबी की रेखा से नीचे रहते थे। ग्रामीण विकास के लिए विभिन्न क्षेत्रीय कार्यक्रमों के अतिरिक्त इन परिवारों की आय बढ़ाने के लिए पंजाब के सभी विकास खण्डों में केन्द्र द्वारा प्रायोजित समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम चलाया जा रहा है। देश के अन्य भागों की तरह पंजाब में हर साल प्रत्येक खण्ड के 600 परिवारों की स्थिति सुधारने के लिए सहायता दी जाती है।

कर्नाटक में गरीबी की रेखा से नीचे रहने वाले परिवारों का पता लगाने तथा उनकी आय बढ़ाने के लिए उपयुक्त कार्यक्रम तैयार करने हेतु परिवारों का सर्वेक्षण किया जा रहा है। राज्य के सभी विकास खण्डों में 2 अक्तूबर, 1980 से समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम आरंभ किया जा चुका है। □

लहलहाती गेहूं की फसल

श्री सूरज प्रसाद उपाध्याय, निवासी ग्राम गेंसाबाद, विकास खंड हटा, जिला दमोह म० प्र०, ने अपनी युवावस्था के दिन बहुत मुसीबत में बिताए और उनकी माली हालत काफी खराब थी। यद्यपि उनके पास 20 एकड़ जमीन थी फिर भी वे खाद्यान्न के लिए दूसरों पर निर्भर थे क्योंकि उनकी जमीन असिंचित थी और उसमें वह केवल रबी फसल के दौरान अलसी, मसूर आदि नकदी फसल ही ले पाते थे और उसी से अपना गुजारा करते थे। जब कभी शीतकालीन बरसात नहीं होती थी तो फसल भी अच्छी नहीं आती थी। लेकिन श्री सूरज प्रसाद उपाध्याय ने बताया कि उस समय वह काफी चिन्तित और परेशान रहा करते थे। क्योंकि उनके परिवार के सदस्यों की संख्या भी लगातार बढ़ती जा रही थी। इसी दौरान उन्होंने गेंसाबाद के ग्रामसेवक से मार्गदर्शन प्राप्त कर भूमि विकास बैंक हटा से पम्प सेट लगवाने के लिए 3300 रुपये कर्ज का फार्म भरा। 1972-73 के माली साल में उन्हें कर्ज मिल गया। और नवम्बर 1973 में एक पम्प सेट उन्होंने खरीद लिया। फिर क्या था इस पम्प सेट से सिंचाई कर वह अपनी उस चार एकड़ जमीन पर भी खेती करने लगे जो अब तक पड़ती रहती थी। श्री उपाध्याय ने बड़े गर्व से कहा कि अब इस 4 एकड़ में मैं गेहूं बोता हूं और प्रति एकड़ 10 क्विंटल का उत्पादन हो जाता है। बाकी 16 एकड़ में अलसी, मटर, मसूर आदि की खेती करता हूं। श्री उपाध्याय ने कहा कि आज हम बहुत सुखी हैं और हमारी खुशहाली का राज है हमारा पम्पसेट जिसे हमने भूमि विकास बैंक से कर्ज लेकर खरीदा था। □

कुओं से सिंचाई और सब्जी का उत्पादन

श्री हलकू काछी, निवासी ग्राम नारायणपुर, विकास खंड हटा जिला दमोह, ... उसी की सहायता से वह अपने परिवार का पालन-पोषण करते थे। लेकिन कभी-कभी खाने के भी लाले पड़ जाते थे। वह जाति के काछी हैं तथा सब्जी उगाने का काम करते हैं। लेकिन सिंचाई के सुविधाजनक साधन के अभाव में प्रायः उनकी सब्जियों की फसल अच्छी नहीं होती थी और किसी-किसी साल तो उन्हें बड़ी मुसीबतों का सामना करना पड़ता था। सन 1979–80 में उनकी मुलाकात ग्रामसेवक श्री राम सुमेर त्रिपाठी से हुई और उनके मार्गदर्शन में श्री हलकू ने अपने पुत्र के नाम पर कुआं खोदने के लिए जिला सहकारी भूमि विकास बैंक हटा से 6,650 रुपये का कर्ज लिया और एक कुआं खुदवाना शुरु कर दिया। लेकिन कुएं का काम पूरा नहीं हो सका। किसी प्रकार 2000 रुपये का उन्होंने और बन्दोबस्त कर कुएं का काम पूरा कर लिया। अब इस कुएं से 5 एकड़ में आसानी से सिंचाई कर श्री हलकू सब्जी के अलावा धान और गेहूं की भी खेती करते हैं। उन्होंने बताया कि पास के बाजार रजपुरा में वह अपनी सब्जी बेचकर अच्छा लाभ कमा रहे हैं। श्री हलकू ने बताया कि उनके यहां तो गेहूं बिल्कुल नहीं होता था लेकिन अब सिंचाई का साधन हो जाने पर गेहूं भी अच्छा पैदा हो जाता है। श्री हलकू ने 28-12-81 को भूमि विकास बैंक हटा में बताया कि उनकी सम्पन्नता से प्रेरणा लेकर उनके गांव के कई छोटे किसानों ने कुआं खोदने के लिए भूमि विकास बैंक से मदद लेने के लिए आवेदन किया है। □

नरगुवां का पंडित छिमाधर

दमोह जिले के तेंदुखेड़ा विकास खंड का एक उनींदा सा गांव नरगुवां इसकी आबादी करीब 1000 है। बिजली पानी का कोई इंतजाम नहीं है। बस दूर-दूर तक पथरीली चट्टानें भर दिखाई देती हैं। अपने खेत की उपज के लिए लोगों को बस ईश्वर का भरोसा है। यदि फसल नहीं हुई तो मेहनत मजदूरी कर लेंगे, जंगल से सिरबोझा ले आएंगे, बैलगाड़ी ... पीने के पानी के बगैर ... एकदम दुश्वार।

पंडित छिमाधर के पिता का ... के पास वाले गांव में संयुक्त परिवार ... बेहिसाब जमीन थी। सम्पत्ति के ... को लेकर उनके परिवार में किसी ... हत्या हो गई, तो वे अपना घर ... और जायदाद का हिस्सा छोड़कर नरगु... में आकर बस गए। चार एकड़ जमीन ... ली और छोटा सा खपच्चियों का ... बना लिया। आज पंडित छिमाधर इसी घर में रहते हैं। गांव के सभी लोग बहुत दूर से पीने का पानी लाते हैं। पंडित छिमाधर गांव की इस तकलीफ को देख नहीं सकते थे, उनके घर-परिवार के लोग भी इससे परेशान थे। एक रोज तेंदुखेड़ा जाते समय उन्हें एक नाले में बहता हुआ साफ पानी दिखाई दिया। उन्होंने मन ही मन कुछ निश्चय किया। गांव के लोगों को बताया। उन्होंने पंडित छिमाधर की हंसी उड़ाई। 'पागल हो गया है पंडित' इतने बड़े नाले के प्रवाह को कौन रोक सकता है। लोग कहते हैं। इससे ज्यादा अच्छा तो यह है कि सरकार से कहा जाए? पंडित छिमाधर का छोटा जवाब था––– जो अपनी मदद आप नहीं करते, उनकी मदद ईश्वर भी नहीं नहीं करता। . . . चलिए, पहला पत्थर मैं डालता हूं दूसरा पत्थर मेरी पत्नी डालेगी और तीसरा पत्थर मेरे बच्चे डालेंगे। जरा देख तो लीजिए।

लोगों ने लहराते हुए नाले को देखा, पत्थर डालते हुए पंडित छिमाधर को देखा और फिर सबने मिलकर उस नाले के पानी के सामने पत्थरों का पहाड़ अड़ा दिया।

आज गांव वालों को इस नाले से अपने निस्तार के लिए पूरा पानी मिल जाता है। □

क्षेत्रीय प्रचार अधिकारी
छिंदवाड़ा

निदेशक, प्रकाशन विभाग, पटियाला हाउस, नई दिल्ली-110001 द्वारा प्रकाशित और प्रबन्धक, भारत सरकार मुद्रणालय, फरीदाबाद द्वारा मुद्रित

RN 708/57
P & T Regd. No. D (DN) 98
Licenced under U (D)-55 to
post without pre-payment at Civil Lines Post Office, Delhi

छोटे किसानों के लिए मुर्गीपालन की सुविधाएं

पिछले दस वर्षों में मुर्गीपालन के धंधे में काफी प्रगति हुई है। वर्ष 1971 में हमारे देश में अंडों का उत्पादन 600 करोड़ के लगभग था जो बढ़ कर 1977 में 1000 करोड़ हो गया। 1983 तक 1600 करोड़ अंडा उत्पादन की सम्भावना है। आज से दस-पन्द्रह वर्ष पूर्व मुर्गीपालन का धंधा केवल आंगन में मुर्गीपालन तक सीमित था, परन्तु अब हमारे देश में काफी बड़े-बड़े मुर्गीफार्म खुल गए हैं। स्थिति यहां तक पहुंच गई है कि कई बड़े मुर्गी पालक हर वर्ष 10,000 से 15,000 तक मुर्गियां पालते हैं। इस प्रगति में सरकार किसानों को बहुत सी विशेष सुविधाएं दे रही है। सरकार छोटे किसानों को जो विशेष सुविधाएं दे रही है वे इस प्रकार हैं :—

हर राज्य के पशु पालन विभाग और कृषि विश्वविद्यालयों में मुर्गीपालन के प्रशिक्षण का प्रबंध है। इसके अतिरिक्त सरकार ने देश भर में 68 छोटे-छोटे केन्द्र और खोले हैं। हरियाणा, पंजाब, दिल्ली, उत्तर प्रदेश के केन्द्रों में भी मुर्गीपालन की दो सप्ताह से दो मास तक की प्रशिक्षण सुविधाएं उपलब्ध हैं। इस प्रशिक्षण में किसानों को मुर्गीपालन के बारे में पूरी जानकारी दी जाती है। दिल्ली में महरौली के पास (सतबड़ी) दिल्ली प्रशासन का मुर्गी फार्म है। इस फार्म पर हर वर्ष दो बार प्रशिक्षण कोर्स चलाया जाता है।

हरियाणा में हिसार, गुड़गांव, अम्बाला व करनाल में प्रशिक्षण सुविधाएं उपलब्ध हैं। पंजाब में गुरदासपुर, जालन्धर, पटियाला और होशियारपुर में ये सुविधाएं उपलब्ध हैं। उत्तर प्रदेश में बाबूगढ़, कानपुर, मेरठ, बनारस, गोरखपुर, मुरादाबाद तथा इलाहाबाद में ये सुविधाएं उपलब्ध हैं।

इसके अतिरिक्त, भारत सरकार छोटे किसानों को मुर्गीपालन का धंधा करने के लिये जो और सुविधाएं देती है वे यह हैं :—

(क) मुर्गीफार्म स्थापित करने के लिए ऋण,
(ख) मुर्गी के चूजे खरीदने के लिये अनुदान (50 प्रतिशत),
(ग) मुर्गियों के लिये वाजिब दामों पर दाना देने का प्रबंध,
(घ) मुफ्त टीका लगाने की सुविधा,
(च) रोग की जांच के लिए प्रयोग- शालाएं,
(छ) मुफ्त इलाज,
(ज) दाना जांच कराने की प्रयोगशालाएं, और
(झ) विपणन की सुविधाएं। □